Postal Reg. No. M.P./Bhopal/4-340/2017-19
R.N.I.No. 51966/1989,ISSN 2455-2399
Date of Publication 15th May 2019
Date of posting 15th & 20th May 2019

मई 2019 • वर्ष 31 • अंक 05 • मूल्य ₹ 40

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

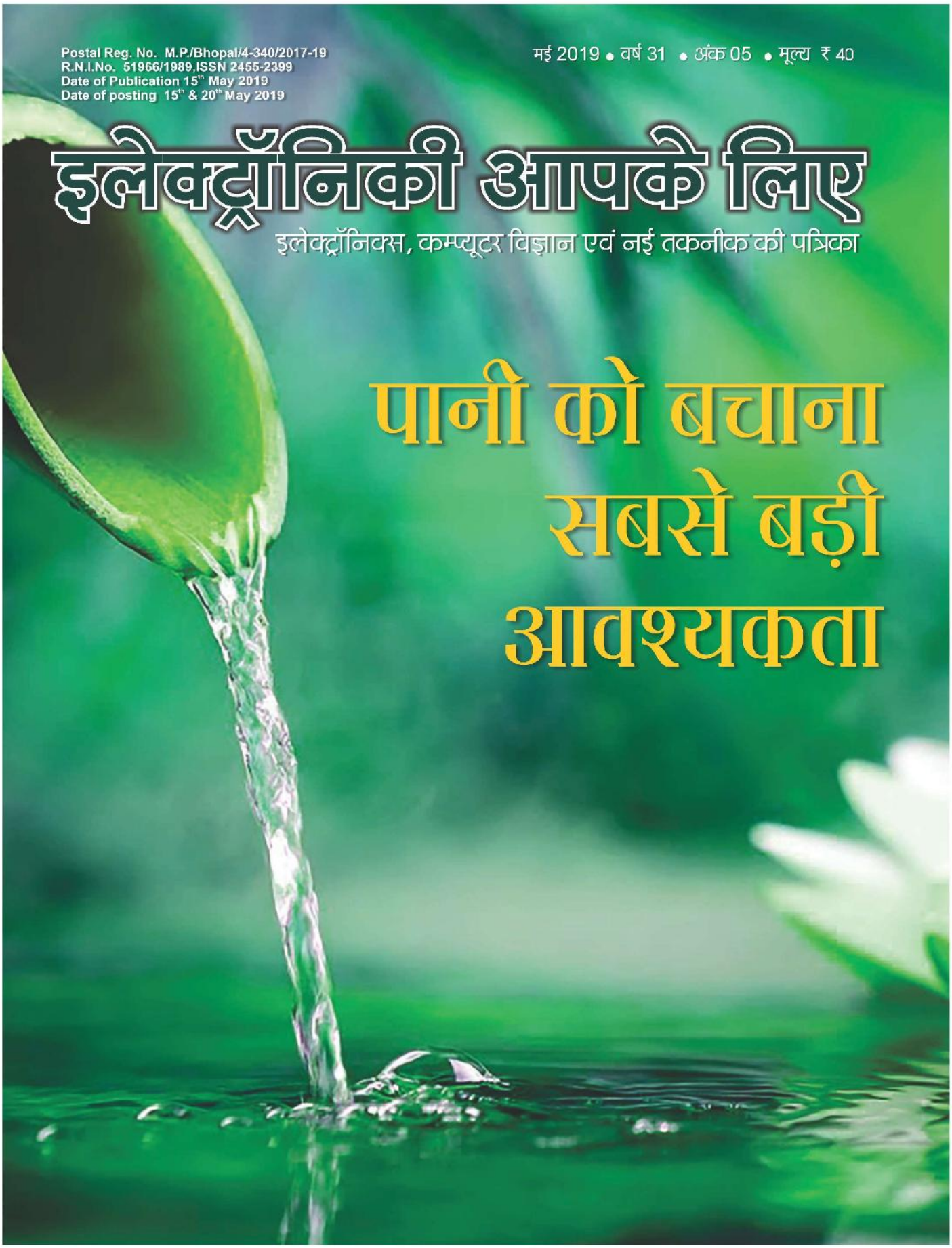

पानी को बचाना सबसे बड़ी आवश्यकता

RNI No. 51966/1989
ISSN 2455-2399
www.electroniki.com
मई 2019
वर्ष 31
अंक 5

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

सलाहकार मण्डल

शरदचंद्र बेहार, डॉ. वि.दि. गर्दे, देवेन्द्र मेवाड़ी, डॉ. मनोज कुमार पटैरिया, डॉ. संध्या चतुर्वेदी, प्रो. विजयकांत वर्मा, डॉ. रविप्रकाश दुबे, डॉ. अशोक कुमार ग्वाल, डॉ. आर.एन.यादव, डॉ. सुनील कुमार श्रीवास्तव, प्रो. राकेश कुमार पाण्डेय, प्रो. अमिताभ सक्सेना

संपादक

संतोष चौबे

कार्यकारी संपादक

विनीता चौबे

उप-संपादक

पुष्पा असिवाल

सह-संपादक

मोहन सगोरिया, रवीन्द्र जैन, मनीष श्रीवास्तव

संस्थागत सहयोग

गौरव शुक्ला, डॉ. डी.एस.राघव, डॉ. विजय सिंह, डॉ. सीतेश सिन्हा, रवि चतुर्वेदी, डॉ. मुनीष गोविंद, डॉ. अनुराग सीठा, डॉ. सत्येन्द्र खरे, संतोष शुक्ला

राज्य प्रसार समन्वयक

शशिकांत वर्मा, लातूर सिंह वर्मा, लियाक़त अली खोखर, राजेश शुक्ला, दर्शन व्यास, शलभ नेपालिया, अंबरीष कुमार, ए.के.सिंह, निशांत श्रीवास्तव, रजत चतुर्वेदी, एम. किरण कुमार, बिनीस कुमार, आबिद हुसैन भट्ट, दलजीत सिंह, अजीत चतुर्वेदी, अमिताभ गांगुली, नरेन्द्र कुमार, इंद्रनील मुखर्जी, अनूप श्रीवास्तव, शैलेष बंसल, सुशांत चक्रवर्ती

क्षेत्रीय प्रसार समन्वयक

राजीव चौबे, जितेन्द्र पांडे, लुकमान मसूद, आर.के. भारद्वाज, प्रवीण तिवारी, अरुण साहू, अभिषेक अवस्थी, विजय श्रीवास्तव, के.आई. जावेद, अमृतेष कुमार, योगेश मिश्रा, मनीष खरे, सचिन जैन, रूपेश देवांगन, राहुल चतुर्वेदी, संतोष उपाध्याय, असीम सरकार, निकुंज शाह, भुवनेश्वर प्रसाद द्विवेदी, राजेश कुमार गुप्ता, सौरभ त्रिपाठी, दीपक पाटीदार, भारत चतुर्वेदी, रक्षि मसूद, वेद प्रकाश परोहा, शैलेन्द्र कुमार शर्मा, अशोक कुमार बारी

समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन

राजेश पंडा

आवरण एवं डिजाइन

वंदना श्रीवास्तव, अमित सोनी

विज्ञान संस्कृति का एक हिस्सा है। संस्कृति केवल कला एवं संगीत और साहित्य ही नहीं है, बल्कि यह तो एक समझ है कि आखिरकार यह संसार किस चीज से बना और यह कार्य कैसे करता है

- मैक्स ऍफ पैरुट्ज

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए 298

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

क्रम

शृंखला आलेख

गागरिन ने देखा था एक सुखद सपना
- शुकदेव प्रसाद /05

सामयिक विज्ञान

भारत का प्रथम एन्टी-उपग्रह मिसाइल तंत्र : मिशन शक्ति
- कालीशंकर /08

अंतरिक्ष में बढ़ता उपग्रहों का कबाड़
- प्रमोद भार्गव /10

विज्ञान आलेख

भारतीय विज्ञान के गौरवशाली क्षण
- डॉ.कपूरमल जैन /12

भारत में विज्ञान : तब और अब
- सुभाष चंद्र लखेड़ा /21

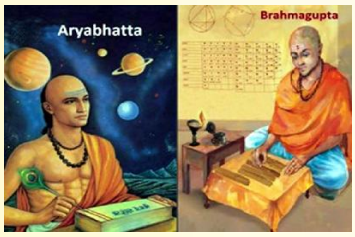

विज्ञान और पर्यावरण

खानपान के रंगबिरंगे रसायन
- डॉ.कृष्ण कुमार मिश्र /26

पानी को बचाना सबसे बड़ी आवश्यकता
- डॉ.मनीष मोहन गोरे /29

श्रद्धांजलि

एक दुर्लभ रोग : न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर
- डॉ.विनीता सिंघल /32

कॅरियर

सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी
- संजय गोस्वामी /36

विज्ञान इस माह

जब दिखेंगे हैली घूमकेतु के अवशेष
- इरफॉन ह्यूमन /41

संस्थागत समाचार

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल

सी.वी.रामन विश्वविद्यालय, बिलासपुर /46

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल–462047

फोन : 0755-2700466 (डेस्क), 2700400 (रिसेप्शन)

e-mail : electroniki@electroniki.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 480/- प्रति अंक : 40/-

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है।

सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।

स्वामी, आईसेक्ट लिमिटेड के लिये प्रकाशक व मुद्रक सिद्धार्थ चतुर्वेदी द्वारा आईसेक्ट पब्लिकेशन्स, 25 ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक- संतोष चौबे।

गागरिन ने देखा था एक सुखद सपना

शुकदेव प्रसाद

समकालीन विज्ञान लेखकों में शुकदेव प्रसाद का नाम अग्र पंक्ति में शुमार है। वे पिछले चार दशकों से विज्ञान लेखन कर रहे हैं। देश विदेश में वे अपने विज्ञान लेखन के लिए उन्हें कई पुरस्कार और सम्मान प्रदान किये गये हैं। सोवियत भूमि नेहरू पुरस्कार से सम्मानित वे एक मात्र भारतीय विज्ञान लेखक हैं। कई विज्ञान किताबों की रचना के साथ ही उन्होंने विज्ञान ग्रंथों और संचयन का संपादन किया है। शुकदेव प्रसाद इलाहाबाद में रहते हैं।

12 अप्रैल, 1961 विज्ञान के इतिहास का एक महत्वपूर्ण दिन है। इसी दिन आदमी के अंतरिक्ष विजय के सपने साकार हुए थे। मेजर यूरी गागरिन ने रूसी यान 'वोस्तोक' में बैठकर धरती की एक परिक्रमा की थी। सारी दुनिया सन्न रह गयी थी गागरिन की इस दिलेरी पर। आदमी के साहस, शौर्य और धैर्य का उत्कृष्ट नमूना - रोमांच से भरपूर।

रातों रात गागरिन अंतरिक्ष सितारे बन गए। दुनिया के कोने-कोने से उन्हें बधाइयां मिलीं। उन्होंने ने कई देशों की यात्राएँ भी कीं। भारत आगमन के अवसर पर उनका गर्म जोशी से स्वागत किया गया। राजधानी के अतिरिक्त उन्होंने कई और भारतीय नगरों का भ्रमण किया। एक सभा में बोलते हुए प्रथम अंतरिक्ष यात्री गागरिन ने किसी भारतीय के साथ अंतरिक्ष यात्रा की आकांक्षा प्रकट की थी -'एक भारतीय अंतरिक्ष यात्री के साथ, अंतरिक्ष की यात्रा करने में मुझे प्रसन्नता होगी।'

इतना ही नहीं, एक अन्य स्थल पर बोलते हुए उन्होंने अपने उद्‌गार व्यक्त किए थे -'किसी दिन यह संभव होगा कि सोवियत और भारतीय अंतरिक्ष यात्री मिलकर अंतरिक्ष का अन्वेषण करेंगे।'

गागरिन ने जो सुखद सपना देखा था, 23 वर्षों के लंबे अंतराल के बाद वह साकार भी हुआ। गागरिन ने जब यह बात कही थी, तब किसने सोचा था की ऐसा कुछ भविष्य में घटित होने वाला है। नहीं कहा जा सकता, कब कौन सी बात अत्यंत महत्वपूर्ण और कालजयी बन जाय। यह अलग बात है, आज मेजर गागरिन हमारे बीच नहीं हैं पर उनके परवर्तियों ने गागरिन के सपने को सच में परिणत कर दिखाया। यह हर्ष और गौरव की बात है की सोवियत यात्रियों के साथ एक भारतीय नागरिक भी अंतरिक्ष की सैर करके वापस आ चुका है। इस संयुक्त उड़ान के साथ भारत-सोवियत मैत्री की एक और नायाब मिसाल कायम हो चुकी है।

सोवियत संघ की पेशकश

वर्ष 1979 में भारत की यात्रा के अवसर पर सोवियत संघ के तत्कालीन राष्ट्रपति लियोनिद ब्रेझनेव ने अपने एक महत्वपूर्ण व्याख्यान में अपनी अभिलाषा प्रकट की, जो दो दशक पूर्व गागरिन ने प्रकट की थी। किसी भारतीय के साथ अंतरिक्ष यात्रा का प्रस्ताव रखते हुए ब्रेझनेव ने कहा –'वह दिन शीध्र ही आएगा, जब भारतीय और सोवियत यात्री संयुक्त उड़ान भरेंगे और दोनों देशों की जनता उनका उत्साह के साथ अभिनंदन करेगी।'

तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इदिरा गांधी ने सोवियत मित्रों की हार्दिक इच्छा का स्वागत करते हुए घोषणा की कि भारतीय अंतरिक्ष यात्रियों को प्रशिक्षित करने और उनमें से एक को 'सैल्यूत' क्रम के सोवियत कक्षीय स्टेशन में भेजने के सोवियत सरकार के प्रस्ताव को भारत सरकार ने मंजूर कर लिया है। संसद में भाषण करते हुए श्रीमती इंदिरा गांधी ने कहा – 'भारत ने सोवियत संघ का प्रस्ताव न केवल इसलिए माना कि यह भारत के लिए मूल्यवान है, और इसका आयाम विस्तृत है, बल्कि इसलिए भी कि भारतीय अंतरिक्ष यात्री की उड़ान देश की नई पीढ़ी के लिए प्रेरणास्पद होगी।

लंबे अरसे से चली आ रही वार्ता ने भारतीय नागरिक की अंतरिक्ष यात्रा की बुनियाद डाली और सोवियत-भारतीय मैत्री के प्रतीक के रूप में भारत भूमि के एक वासी ने सोवियत यात्रियों के साथ अंतरिक्ष में उड़ान की और सकुशल धरती पर लौट भी आया।

उस सौभाग्यशाली का नाम है राकेश शर्मा जिसे प्रथम भारतीय अंतरिक्ष यात्री होने की विशिष्ट गरिमा मिली। 3 अप्रैल, 1984 को भारतीय वायुसेना के स्क्वाड्रन लीडर राकेश

शर्मा ने 'सोयूज टी-11' यान में बैठ कर उड़ान भरी। साथ में सोवियत संघ के कमांडर यूरी मैलिशेव तथा इंजीनियर गेन्नाडी स्त्रेकालेव भी थे। पूर्व स्थापित प्रयोगशाला 'सैल्यूत-7' में 8 दिन तक रहकर 11 अप्रैल, 1984 को सकुशल यात्रीगण धरती पर वापस आए।

इस ऐतिहासिक उड़ान के साथ ही भारत का नाम उन राष्ट्रों में शुमार हो गया जिनके यात्री अंतरिक्ष यात्रा कर चुके हैं।

इस यात्रा से राकेश शर्मा को अंतरिक्ष में उड़ान भरने वाले 138 वें व्यक्ति की संज्ञा मिली और अंतरिक्ष में अपना यात्री भेजने वाले राष्ट्रों की कोटि में भारत का नाम 14 वें स्थान पर अंकित हुआ।

भारतीय अंतरिक्ष यात्री का चयन और प्रशिक्षण

यह कहने में बड़ा आसन लगता है की भारत भूमि से भी एक आदमी अंतरिक्ष की यात्रा करके सकुशल धरती पर वापस आ चुका है पर बात इतनी आसन नहीं। यात्रा से पूर्व अंतरिक्ष यात्रियों को कई कठिन परीक्षणों से गुजरना पड़ता है, लंबी अवधि तक उन्हें खासा प्रशिक्षण लेना पड़ता है, तब कहीं जाकर सफल होती है अंतरिक्ष की यात्रा।

यात्रा से पूर्व अंतरिक्ष यात्री का चुनाव अपने आप में जटिल समस्या है। वास्तव में अंतरिक्ष यात्रा के लिए किसी कुशल विमान चालक का अनुभव लाभप्रद होता है। इसी नाते प्रारम्भ में भारतीय वायु सेना के 150 प्रत्याशियों में से 20 का चुनाव किया गया। लगभग 4 महीनों की गहरी परख के बाद इनमें से 8 को चुना गया।

इनकी डाक्टरी जांच के बाद 4 प्रत्याशियों को मास्को भेजा गया। फिर यहाँ शुरू हुआ लगभग एक पखवाड़े तक कठिन परीक्षणों का दौर। प्रत्येक को अलग-अलग कमरों में लगभग 72 घंटे की अवधि तक एकदम निपट अकेला रखा गया। किसी भी तरह का कोई संपर्क नहीं। सिर्फ टिमटिमाती हुई हल्की सी लैम्प की रोशनी। एक छोटे से गुप्त दरवाजे से उन्हें भोजन पहुँचाया जाता था। चूंकि अंतरिक्ष यान में भी ऐसे ही अलग-थलग तन्हा यात्रा करनी पड़ती है, अतः प्रत्याशियों में से कौन ऐसी एकांतिक यात्रा के लिए मनोवैज्ञानिक रूप से अपने को तैयार कर पाता है, इसकी जाँच के लिए कठोर परीक्षण किया गया और इनमें से अंततः दो भारतीय चुने गए।

ये दोनों भारतीय थे-स्क्वाड्रन लीडर श्री राकेश शर्मा और विंग कमांडर श्री रवीश मल्होत्रा। दोनों योग्यता प्राप्त कुशल विमान चालक हैं। 25 दिसंबर 1943 को जन्मे रवीश मल्होत्रा ने तब तक 3400 घंटों की उड़ानें की थी और 13 जनवरी, 1949 को जन्मे राकेश शर्मा को तब तक 1600 घंटों तक विमान के उड़ान का खासा अनुभव था।

प्रशिक्षण का दौर

अंतरिक्ष यात्रा से पूर्व अंतरिक्ष यात्री को कई

यूरी गैगरीन, वालेनतीन (पत्नी), पं.जवाहर लाल नेहरू

यूरी गैगरीन इंदिरा गाँधी के साथ

यूरी गैगरीन अपनी बेटियों के साथ

तरह के दौर से गुजरना पड़ता है ताकि वे अंतरिक्ष की गुरुत्वहीन परिस्थितियों के अनुरूप अपने आप को ढाल सकें, अन्यथा जरा सी भी गफलत से जान भी जा सकती है। निर्धारित योजना के अनुसार अप्रैल 1984 में 'भारत-सोवियत संयुक्त उड़ान' होनी थी, अतः दोनों भारतीयों का प्रशिक्षण सोवियत संघ के 'ब्रेझनेव नक्षत्र-नगरी' के यूरी गागरिन केंद्र में 1982 से ही प्रारंभ हो गया।

सहज ही प्रश्न उठता है की जब एक ही यात्री को अंतरिक्ष यात्रा करनी थी तो दो यात्रियों को लंबी ट्रेनिंग क्यों दी गई ? ऐसा मात्र विकल्प के लिए किया गया था। यदि अंतिम क्षण तक किसी भी के साथ कोई बाधा उपस्थित हो जाय तो दूसरे को उसकी जगह पर भेज दिया जाये। और मजे की बात यह है कि उड़ान के चंद घंटे पूर्व ही यह निर्धारित किया जाता है कि अंततः कौन उड़ान भरेगा पर क्या मजाल कोई यात्री इस प्रशिक्षण के दौरान जरा सी भी लापरवाही बरते। अंत तक उसी उत्साह और लगन के साथ दोनों भारतीय विमान चालक प्रशिक्षण लेते रहे।

प्रारंभ में ही तीन-तीन अंतरिक्ष यात्रियों के दो दल बनाए गए थे। पहले दल में दो सोवियत यात्रियों के साथ राकेश शर्मा को रखा गया था और दूसरे दल में दो सोवियत यात्रियों के साथ रवीश मल्होत्रा को। चूंकि प्रशिक्षण रूसी भाषा में ही हुआ, अतः रवीश और राकेश दोनों ने रूसी भाषा का ठीक से अभ्यास किया और कई सैद्धांतिक तथा प्रायोगिक प्रशिक्षण प्राप्त किए।

सैद्धांतिक प्रशिक्षण

सैद्धांतिक प्रशिक्षण के कुछ अंग इस प्रकार हैं :

- अंतरिक्ष उड़ान गतिकी
- कम्प्यूटर तकनीक
- अंतरिक्ष यान डिजाइन
- विकिरण सुरक्षा
- अंतरिक्ष यान संचालन
- वायु अंतरिक्षीय चिकित्सा

प्रायोगिक प्रशिक्षण

वस्तुतः प्रायोगिक प्रशिक्षण अपने आप में महत्वपूर्ण चरण है। अंतरिक्ष यान को लेकर राकेट उड़ता है तो भयानक गर्जना होती है, अचानक यान में बैठे यात्रियों का भार पांच गुने ज्यादा हो जाता है। प्रक्षेपण राकेट के इंजन बंद होते ही भारहीनता की स्थिति आ जाती है। वस्तुतः यह बड़ी कठिन घड़ी होती है। इन प्रतिपल बदलती हुई परिस्थितियों में अंतरिक्ष यान का नियंत्रण, धरती के साथ संपर्क आदि करने में अंतरिक्ष यात्री का अत्यधिक सक्षम होना जरूरी है, इसी नाते उसे कई तरह के प्रायोगिक प्रशिक्षण दिए जाते हैं। इस प्रशिक्षण के प्रमुख अंग इस प्रकार हैं :

- कठोर शारीरिक व्यायाम
- वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में शून्य गुरुत्व की उड़ानों में सहभागिता।

- घूर्णन करने वाली कुर्सियों और अपकेन्द्रण (Centrifuge) कक्षाओं में प्रशिक्षण।
- समुद्र में जीवित रहने का प्रशिक्षण।
- यान से धरातल पर उतरने और साथ ही
- समुद्र में उतरने का प्रशिक्षण।

यह सब इस नाते किया जाता है की आपातकाल में यदि उन्हें समुद्र में उतरना पड़े तो वे बाहर आकर बचे रहने के तौर तरीकों से परिचित हो सकें।

इस उड़ान दल को अंतरिक्ष में पहले से ही स्थापित स्टेशन 'सैल्यूत' से अपना यान जोड़ना था और फिर सुरंग के जरिये उसमें जाकर पूर्व निर्धारित वैज्ञानिक प्रयोग करने थे, अतः इस तकनीकी प्रशिक्षण के अलावा किए जाने वाले प्रयोगों के लिए भी ट्रेनिग दी गई। प्रशिक्षण के दौरान अंतरिक्ष यात्रियों ने अपना 70 प्रतिशत समय अंतरिक्ष यान और उसका नियंत्रण करने में गुजारा।

भारतीय अंतरिक्ष यात्रियों के प्रशिक्षण का पहला दौर सितम्बर 1982 में और दूसरा सितम्बर 1983 से आरंभ हुआ। यह दौर उड़ान के लगभग पूर्व तक चलता रहा।

'नक्षत्र-नगरी (Star City), जहाँ भारतीय अंतरिक्ष यात्रियों को प्रशिक्षण दिया गया, को देखने प्रधान मंत्री श्रीमती इदिरा गांधी भी गई थीं। 23 सितम्बर 1983 को उन्होंने 'नक्षत्र-नगरी' में भारतीय और सोवियत अंतरिक्ष यात्रियों से मुलाकात की और उनको प्रोत्साहित किया। विदा होने से पूर्व उन्होंने वहाँ की दर्शक-पुस्तिका में अपनी टिप्पणी लिखी - 'अंतरिक्ष यात्रियों की उपलब्धियां मानव के अदम्य उत्साह और महान कार्य करने के उसके अक्षय एवं दुर्दम साहस का प्रतीक हैं।'

sdprasad24oct@yahoo.com

भारत का प्रथम एन्टी-उपग्रह मिसाइल तंत्र

मिशन शक्ति

कालीशंकर

इसरो के वरिष्ठ वैज्ञानिक विगत लगभग चालीस वर्षों से अंतरिक्ष विज्ञान और अंतरिक्ष अन्वेषण पर लेखन करते रहे हैं। तीन सौ से अधिक लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छपे तथा 25 पुस्तकें प्रकाशित हुईं हैं। आपको कई राष्ट्रीय सम्मानों से सम्मानित किया गया है। कालीशंकर लखनऊ में निवास करते हैं।

भारत ने बुधवार, 27 मार्च 2019 को एक बड़ी उपलब्धि हासिल करते हुए अन्तरिक्ष में मार करने वाली एन्टी उपग्रह मिसाइल का सफल प्रक्षेपण किया। इस उपलब्धि के साथ ही भारत दुनिया का चौथा ऐसा देश बन गया है जिसके पास अन्तरिक्ष में मार करने वाले मिसाइल की तकनीक हासिल है। अभी तक अन्तरिक्ष में मार करने की शक्ति केवल अमरीका, रूस, और चीन के पास ही थी। लेकिन अब भारत भी इस ताकतवर सूची में शामिल हो गया है। वास्तव में भारत के ऐन्टी उपग्रह हथियार (ऐन्टी-सैटेलाइट वीपन) ने पृथ्वी की निम्न कक्षा (लो अर्थ आरबिट) में तीन मिनट के भीतर ही एक लाइव सैटेलाइट को मार गिराया। एन्टी सैटैलाइट (ए-सैट) के द्वारा भारत अपने अन्तरिक्ष कार्यक्रम को सुरक्षित रख सकेगा। भारत के इसरो और डी.आर.डी.ओ. ने संयुक्त प्रयास के अन्तर्गत इस मिसाइल को विकसित किया है। इस प्रकार भारत विश्व में एक बार फिर अपनी योग्यता और प्रतिबद्धता सिद्ध करने में सफल हुआ है। इस मिशन में प्रयुक्त एन्टी सैटेलाइट पूर्ण रूप से भारत में विकसित की गई है तथा इस शक्तिशाली प्रदर्शन ने भारत को शक्तिशाली देशों की सूची में प्रतिबद्ध कर विशेष मान प्रदान करेगा। इसरो और डी.आर.डी.ओ. के इस संयुक्त मिशन को 'मिशन शक्ति' नाम दिया गया है।

पूरे मिशन 'शक्ति' के आपरेशन के बारे में बताते हुए प्रधान मंत्री ने कहा, ''हम सभी भारतीयों के लिए यह गर्व की बात है। यह पराक्रम भारत में ही तैयार 'ए-सैट' मिसाइल द्वारा किया गया है। मैं इस अभियान से जुड़े सभी लोगों को बहुत-बहुत बधाई देता हूँ। आज फिर उन्होंने देश का मान बढ़ाया है। हमें अपने वैज्ञानिकों पर गर्व है।'' आने वाले दिनों में इनका इस्तेमाल और महत्व बढ़ना है और ऐसे में इनकी सुरक्षा भी बहुत महत्वपूर्ण है। यह आपरेशन किसी देश के खिलाफ नहीं है तथा प्रधानमंत्री ने कहा, ''आज का यह परीक्षण किसी भी तरह के अन्तर्राष्ट्रीय कानून या संधि समझौतों का उल्लंघन नही करता है। हम इसका इस्तेमाल 130 करोड़ देशवासियों की सुरक्षा और शक्ति के लिए ही करना चाहते हैं।

ए-सैट मिसाइल के द्वारा दुश्मन देश के उपग्रह को निशाने पर रखा जा सकता है, अन्तरिक्ष में किसी भी उपग्रह को गिराया जा सकता है, धरती से कई कि.मी. दूर आपरेशन को अंजाम दिया जा सकता है, सामरिक सैन्य उद्देश्यों में इस्तेमाल उपग्रह को नष्ट कर सकता है, किसी भी देश के संचार तंत्र को खत्म कर सकता है तथा युद्ध के समय दुश्मन देश के उपग्रह को गिरा सकता है। इस मिशन का परीक्षण ओडीसा तट के पास ए.पी.जे.अब्दुल कलाम द्वीप लाँच काम्प्लेक्स से किया गया। यह डी.आर.डी.ओ. की ओर से एक तरह का तकनीकी मिशन था। मिसाइल के परीक्षण के लिए जिस उपग्रह को निशाना बनाया गया, वह भारत के उन उपग्रहों में से हैं जो पहले ही पृथ्वी की निम्न कक्षा में मौजूद हैं।

एन्टी सैटेलाइट हथियार (ए सैट) अन्तरिक्ष हथियार है जो सामरिक सैन्य उद्देश्यों के लिए उपग्रहों को निष्क्रिय करने या नष्ट करने के लिए तैयार किया जाता है। भारत से पहले यह तंत्र केवल अमरीका, रूस, और चीन के पास ही था हालांकि किसी भी देश द्वारा युद्ध में 'ए-सैट' प्रणाली का इस्तेमाल नहीं किया गया है। कई देशों ने अपने 'ए-सैट' क्षमताओं के बल के प्रदर्शन में

प्रदर्शित करने के लिए केवल अपने दोषपूर्ण उपग्रहों को इसके द्वारा नष्ट किया है। इस तरह 27 मार्च, 2019 को भारत इस विशेष क्लब में प्रवेश करने वाला नया और चौथा देश बना है।

अमरीका ने वर्ष 1950 में डब्ल्यू.ए. एस.-199 ए नाम से रणनीतिक रूप से अहम मिसाइल परियोजनाओं की एक शृंखला की शुरूआत की थी। उसने 26 मई 1958 से लेकर 13 अक्टूबर 1959 के बीच 12 परीक्षण किये थे। लेकिन इन सभी में उसे असफलता हासिल हुई। लेकिन 21 फरवरी, 2008 को अमरीकी डिस्ट्रॉयर जहाज ने रिम-161 मिसाइल के द्वारा अन्तरिक्ष में यू.एस.ए.153 नाम के एक उपग्रह को मार गिराया था। इस तरह उसे यह उपलब्धि प्राप्त हुई।

वहीं, माना जाता है कि रूस ने शीत युद्ध के दौरान अमरीका बढ़त को कम करने के लिए वर्ष 1956 में सरगेई कोरोलेव ने ओ.के. बी-1 नाम की मिसाइल पर काम करना शुरू किया था। इसके पश्चात रूस के इस मिसाइल कार्यक्रम को खुश्चेव ने आगे बढ़ाया। रूस ने मार्च 1961 में इस्ट्रेबिटेल स्पुतनिक के रूप में अपने फाइटर सैटेलाइट कार्यक्रम की शुरूआत की थी। रूस ने फरवरी 1970 में दुनिया का पहला सफल इन्टरसेप्ट मिसाइल का सफल परीक्षण किया था। हालांकि बाद में रूस ने इस कार्यक्रम को बन्द कर दिया था। लेकिन अमरीका द्वारा फिर से परीक्षण शुरू करने के बाद 1976 में रूस ने अपनी बन्द परियोजना को फिर से शुरू कर दिया।

उधर पड़ोसी देश चीन ने 11 जनवरी 2007 को अपने खराब पड़े मौसम उपग्रह को मारकर इस क्लब में प्रवेश किया था। चीन के इस परीक्षण ने धरती की कक्षा में अब तक का सबसे बड़ा मलबा तैयार कर दिया। इस मलबे में उपग्रह के तीन हजार छोटे-छोटे टुकड़े अन्तरिक्ष में तैरने लगे।

`ए-सैट- मिसाइल ने तीन चरणों में काम पूरा किया

भारत ने जिस तकनीक से अपने पुराने उपग्रह को मार गिराया, वह डिफेन्स की एक अहम तकनीक है। इस मिसाइल ने तीन चरणों में काम किया। इसमें राडार की मदद से पहले दुश्मन उपग्रह को ट्रैक किया जाता है। इसके बाद उपग्रह की गतिजता (मूवमेन्ट) को ट्रैक किया जाता है। इसके बाद नियंत्रण कक्ष से ट्रैक किये गये लक्ष्य (टारगेट) को नष्ट करने की कमान्ड जारी की जाती है। नियंत्रण कक्ष से कमान्ड मिलते ही ए-सैट इन्टरसेप्टर मिसाइल अपने लक्ष्य को भेदने के लिए लॉंच हो जाती है। अन्तरिक्ष में पहुँचते ही इस मिसाइल का इंजन उससे अलग हो जाता है। इसके बाद राडार की मदद से इसे गाइड किया जाता है। दूसरे चरण में मिसाइल पर लगी हीट शील्ड मिसाइल से अलग हो जाती है। इसके बाद मिसाइल टारगेट को निशाना बनाती है और उसे पूरी तरह नष्ट कर देती है।

यह मिशन पूरी तरह से स्वदेशी है तथा इसे इसरो और डी.आर.डी.ओ. की सहायता से पूरा किया गया है। इस दृष्टि से भारत की इस मिशन की उपलब्धि उतनी ही बड़ी है जितना पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेई की अगुवाई में हुआ परमाणु परीक्षण। तब भी दुनिया के किसी देश को खबर नहीं थी कि भारत इतनी बड़ी तैयारी कर रहा है या फिर कर भी दिया है। 11 मई, 1998 को राजस्थान के पोखरण में तीन परमाणु बमों का सफल परीक्षण किया गया था। इसी के साथ ही भारत न्यूक्लियर नेशन बन गया था। पोखरण परमाणु परीक्षण मिशन का नाम 'आपरेशन शक्ति' था तथा वर्तमान मिशन का नाम 'मिशन शक्ति' है।

मिशन `शक्ति` की खास बातें

भारतीय वैज्ञानिकों ने तीन सौ किलोमीटर दूर निम्न कक्षा के एक उपग्रह को मार गिराया। भारत ने जिस उपग्रह टार्गेट को मार गिराया है, वह एक पूर्व निर्धारित लक्ष्य था। इस लक्ष्य को 'ए-सैट' (एन्टी सैटेलाइट) मिसाइल के द्वारा मार गिराया गया है। खास बात यह है कि इस मिशन को मात्र तीन मिनट में पूरा किया गया है। मिशन शक्ति का प्रयोग केवल देशवासियों की सुरक्षा था। मिशन शक्ति का प्रयोग किसी भी देश के विरूद्ध नहीं किया जाता है। इस कक्षा में ही सभी तरह के जासूसी उपग्रहों का उपयोग किया जाता है। भारत ने इसी तरह के सैटेलाइट को मार गिराने की क्षमता हासिल की है। निम्न कक्षा का प्रयोग दूरसंचार के लिए किया जाता है। यह कक्षा पृथ्वी से चार सौ से एक हजार मील की ऊँचाई पर होती है जिसमें निम्न कक्षा के उपग्रह स्थित होते है। इन उपग्रहों का उपयोग मुख्य रूप से डाटा संचार के लिए किया जाता है।

भारत के 'मिशन शक्ति को इक्कीस साल पहले हुए परमाणु परीक्षण समान ही बताया जा रहा है। विशेषज्ञों का कहना है कि जिस तरह से हमने इक्कीस साल पहले दुनिया को अपनी ताकत का अहसास कराया था, मिशन शक्ति को भी कुछ इसी अंदाज में भारतीय वैज्ञानिकों ने अपनी क्षमता का लोहा मनवाया है।

देश की सुरक्षा को और ज्यादा मजबूती मिलेगी

ब्रिगेडियर (सेवा निवृत्त) के.जी.बहल ने इस मिशन के बारे में कहा कि इससे देश की सुरक्षा को और ज्यादा मजबूती मिलेगी। यह पूरे देश के लिए गर्व का पल है कि हम दुनिया के उन चुनिन्दा देशों में शामिल हो गये हैं जिनके पास इस तरह की शक्ति है। इस मिशन से देश की सुरक्षा तो मजबूत होगी ही साथ ही साथ भारत की सेना का मनोबल भी बढ़ेगा। देश के वैज्ञानिकों ने इस उपलब्धि को हासिल कर बता दिया है कि भारत भी बड़े-बड़े से खतरों से निपटने के लिए तैयार है।

ksshukla@hotmail.com

अंतरिक्ष में बढ़ता उपग्रहों का कबाड़

प्रमोद भार्गव

प्रमोद भार्गव एक पत्रकार और विज्ञान संचारक के रूप में देशभर में जाने जाते हैं वहीं उनका दूसरा पक्ष एक लोकप्रिय कथाकार का भी है। समकालीन परिदृश्य और समसामयिक विषयों जिनमें विज्ञान भी शामिल है, पर प्रमोद भार्गव की गहरी नज़र रहती है। वे तात्कालिक विज्ञान-अनुसंधान और हलचल पर लिखने के लिये खासे चर्चित हैं। प्रमोद भार्गव म.प्र. के शिवपुरी में निवास करते हैं।

मनुष्य को सुरुचिपूर्ण जीवन देने के लिए उन्नत विज्ञान की चाह में हरेक देश इस कोशिश में है कि उसके उपग्रह अंतरिक्ष में स्थापित हो जाएं। इनकी बढ़ती संख्या और बेकार हो चुके उपग्रह अंतरिक्ष में कबाड़ का सबब भी बन रहे हैं। इन्हें जब प्रक्षेपास्त्र से नष्ट किया जाता है, तो ये लाखों टुकड़ों में बदलकर तेज गति से अंतरिक्ष में ही घूमते रहते हैं। भारत ने हाल ही में उपग्रह भेदी मिसाइल (ए-सैट) से अपने ही एक उपग्रह को नष्ट करके अंतरिक्ष में मिसाइल से निशाना साधने की एक बड़ी वैज्ञानिक उपलब्धि हासिल की है। अमेरिका के पेंटागन स्थित रक्षा मंत्रालय के प्रवक्ता डेविड ईस्टबर्न ने कहा है कि अमेरिका इस परीक्षण की वजह से उत्पन्न हुए मलबे के 250-270 टुकड़ों पर निगरानी रखे हुए हैं। हालांकि इससे अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन (आईएसएस) को कोई खतरा नहीं है। इस खबर से यह विवाद भी छिड़ गया है कि अमेरिका भारत की उपग्रह भेदी मिसाइल के सिलसिले में पहले से ही जासूसी में लगा था और उसे पता था कि यह परीक्षण कब किया जाएगा। इस सवाल की सफाई में ईस्टबर्न ने कहा है कि 'कोई भी अमेरिकी तंत्र भारत की जासूसी नहीं कर रहा था, बल्कि अमेरिका भारत के साथ अपनी साझेदारी बढ़ा रहा है, जिससे आर्थिक संबंधों को मजबूती मिले। बहरहाल गुप्तचरी एक अलग मसला है, लेकिन अंतरिक्ष में कबाड़ के रूप में जो 17 करोड़ टुकड़े गतिशील हैं, वे किसी भी वक्त सक्रिय उपग्रह से टकराकर उन्हें नष्ट कर सकते हैं। अंतरिक्ष स्टेशन को भी इस कबाड़ से खतरा है। ऐसा होने पर यह विश्व अर्थव्यवस्था के लिए विनाशकारी साबित हो सकता है। ध्यान रहे अंतरिक्ष कबाड़ से बचने के लिए ही आईएसएस को अपनी स्थिति नियमित रूप से बदलनी पड़ती है।

अंतरिक्ष विशेषज्ञों के अनुसार पुराने रॉकेट और बेकार हो चुके उपग्रहों का मलबा बहुत तेज गति से पृथ्वी की कक्षा में घूमता है। यह जल्दी ही वातावरण की ऊपरी सतह को बेकार कर सकता है। वर्तमान में पृथ्वी की इस कक्षा में 3000 से भी ज्यादा उपग्रह चलायमान हैं। यह मानव समाज के लिए आवश्यक हैं, क्योंकि इनके जरिए जलवायु परिवर्तन के प्रभावों की सतत जानकारी तो ली ही जा रही है, संचार व्यवस्था भी इन्हीं उपग्रहों से संचालित होती है। इनसे रक्षा के क्षेत्र में निगरानी और जासूसी भी की जाती है। इस कक्षा में मौजूद उपग्रहों की लागत करीब 33 लाख करोड़ रुपए हैं। इनसे लगभग 20,000 करोड़ आस्ट्रेलाई डॉलर एक वर्ष में कमाए जाते हैं।

भारत ने अंतरिक्ष में उपग्रह स्थापित करने की प्रौद्योगिकी हासिल की है, तब से वह भी इस व्यापार से करोड़ों डॉलर कमा रहा हैं। भारत ने एक साथ 104 उपग्रह स्थापित करने का कीर्तिमान भी बनाया है और अब भारत उपग्रह भेदी मिसाइल का निर्माण व प्रयोग कर अमेरिका, रूस और चीन के बाद इस क्षेत्र में चौथा देश बन गया है। आस्ट्रेलिया में अंतरिक्ष पर्यावरण शोध केंद्र के सीईओ बेन ग्रीन का कहना है कि अंतरिक्ष में इतना मलबा इकट्ठा हो गया है कि परस्पर टकरा रहा हैं, जिस कारण यह कबाड़ एक सेंटीमीटर तक के टुकड़ों में परिवर्तित होता जा रहा है।

इनका आकार एक सॉफ्टबॉल से भी बड़ा है। नतीजतन यह आशंका बन रही है कि यह खतरनाक अंतरिक्ष कबाड़ चक्कर लगा रहे सभी उपग्रहों को कहीं नष्ट न कर दे? अंतरिक्ष कबाड़ के 17 करोड़ टुकड़ों में से फिलहाल सिर्फ 22,000 टुकड़ों को ही सूचीबद्ध किया जा सका है।

अमेरीकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा के मुताबिक मलबे के पाँच लाख से भी ज्यादा टुकड़े या स्पेस जंक पृथ्वी की कक्षा में 17,500 मील प्रति घंटे की रफ्तार से घूम रहे हैं। यह मलबा इतना शक्तिशाली है कि इसका एक छोटा सा टुकड़ा भी किसी उपग्रह या अंतरिक्ष यान को क्षतिग्रस्त करने के लिए सक्षम है। यहाँ तक कि सौ अरब डॉलर की लगत से बने अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन को भी इन टुकड़ों से बचकर निकलना होता है। अंतरिक्ष वैज्ञानिक लगातार चेतावनी दे रहे हैं कि अंतरिक्ष में मलबा खतरनाक स्तर तक पहुँच गया है और इसे जल्दी ही नहीं हटाया गया तो इससे भविष्य में अंतरिक्ष यान और उपयोगी उपग्रह नष्ट हो सकते हैं। यदि ऐसा हुआ तो अंतरिक्ष अभियानों पर भी प्रतिबंध लगाना जरूरी हो जाएगा। दूसरी तरफ अमेरिकी खगोल विज्ञानियों ने एक सर्वेक्षण करके बताया है कि अंतरिक्ष से प्रत्येक वर्ष 1000 टन कबाड़ धरती पर गिरता है। इसकी ठीक से पहचान नहीं हो पा रही है। अंतरिक्ष का यह कबाड़ प्राकृतिक भी हो सकता है और मानव निर्मित भी। बेकार हो चुके अंतरिक्ष यान, नष्ट किए गए उपग्रह और इनके कलपुर्जे ही वे मानव निर्मित वस्तुएं हैं, जो कचरे के रूप में अंतरिक्ष में मंडरा रही हैं और फिर एकाएक अंतरिक्ष के गुरुत्वीय बल से छिटक कर धरती के चुंबकीय प्रभाव में आ जाती हैं।

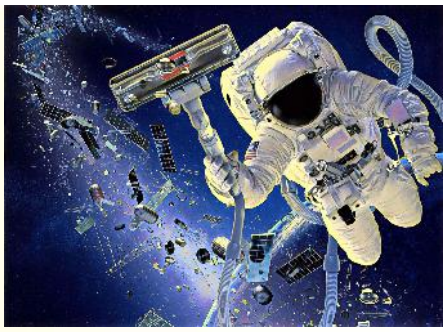

नासा के मुताबिक मलबे के पाँच लाख से भी ज्यादा टुकड़े या स्पेस जंक पृथ्वी की कक्षा में 17,500 मील प्रति घंटे की रफ्तार से घूम रहे हैं। यह मलबा इतना शक्तिशाली है कि इसका एक छोटा सा टुकड़ा भी किसी उपग्रह या अंतरिक्ष यान को क्षतिग्रस्त करने के लिए सक्षम है। यहाँ तक कि सौ अरब डॉलर की लगत से बने अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन को भी इन टुकड़ों से बचकर निकलना होता है। अंतरिक्ष वैज्ञानिक लगातार चेतावनी दे रहे हैं कि अंतरिक्ष में मलबा खतरनाक स्तर तक पहुँच गया है और इसे जल्दी ही नहीं हटाया गया तो इससे भविष्य में अंतरिक्ष यान और उपयोगी उपग्रह नष्ट हो सकते हैं।

अंतरिक्ष में मलबे का ढेर लगने से छोटी-मोटी घटनाओं से परे कुछ घटनाएं ऐसी भी हैं, जिन्होंने अंतरिक्ष में कचरे का अंबार लगा दिया है। 2007 में चीन ने एक साथ बड़ी मात्रा में अपने उपग्रह भेद कर अंतरिक्ष में कबाड़ एकत्रित कर दिया था। चीन ने इसी साल उपग्रह भेदी मिसाइल बनाकर उसका परीक्षण करने के लिए अपने ही बेकार हो चुके उपग्रह नष्ट किए थे। व्यर्थ हो चुका मौसम की जानकारी देने वाले एक उपग्रह के तो 1.5 लाख टुकड़े कर दिए थे। इस कबाड़ का प्रत्येक टुकड़ा एक सेंटीमीटर के बराबर है। इसके बाद 1996 में एक पुराने फ्रांसीसी उपग्रह की अपने ही देश के एक पुराने रॉकेट के अवशेषों से टक्कर हो गई। इससे भी बड़ी मात्रा में कबाड़ पैदा हुआ था। 10 फरवरी 2009 को एक खराब रूसी उपग्रह की अमेरिका के ईरीडियम व्यापारिक सक्रिय उपग्रह से टक्कर हो गई। इस कारण 2,000 टुकड़ों का नया कचरा पैदा हुआ। यह कचरा भविष्य के अंतरिक्ष अभियानों को भी प्रभावित करने की स्थिति में आ गया है। यह बाधा तब देखने में आई थी, जब भारत के स्वदेशी पीएसएलवीसी-21 रॉकेट के प्रक्षेपण मिशन में दो मिनट की देरी हुई। श्री हरिकोटा के सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र से जब पीएसएलवी सी-21 की 2 उपग्रहों के साथ अंतरिक्ष की ओर रवानगी डाली तो 51 घंटे की उल्टी गिनती को दो मिनट के लिए बढ़ाना पड़ा था। 9 सितंबर 2017 को 9 बजकर 51 मिनट पर यह प्रक्षेपण किया जाना था। लेकिन अंतरिक्ष के मलबे ये टक्कर बचाने के लिए इस प्रक्षेपण को दो मिनट रोकना पड़ा। यह रॉकेट अपने साथ फ्रांस के उपग्रह एसपीओटी-6 और जापान के अंतरिक्ष यान प्राईटेरेस को लादकर रवाना हुआ था। गोया, निर्धारित समय से 18 मिनट बाद इन उपग्रहों को उनकी कक्षा में स्थापित करने में सफलता मिल पाई थीं।

साफ है, कालांतर में यह कचरा न केवल अंतरिक्ष अभियानों को तो संकट में डालेगा ही, बल्कि धरती पर भी यह कचरा आफत का सबब बन सकता है। बेकार उपग्रह और यान कभी भी धरती पर गिर सकते हैं। 2016 में छह टन वजनी यूआरए उपग्रह पृथ्वी पर गिरा था। इससे पहले 1989 में 100 टन वजनी स्काईलैब उपग्रह हिंद महासागर में और 2001 में रूस का स्पेस स्टेशन मीर दक्षिणी महासागर में गिरा था। हालांकि अब तक अंतरिक्ष अभियान के इतिहास में यह संतोष की बात है कि इन कबाड़ों के धरती या समुद्र में गिरने से कोई मानवीय क्षति नहीं हुई है। इसका कारण है कि ज्यादातर कचरा धरती पर पहुँचने से पहले ही जलकर खाक हो जाता है। बावजूद जान-माल की हानि की आशंकाओं से इंकार नहीं किया जा सकता है।

अब अंतरिक्ष वैज्ञानिक इस कोशिश में लगे हैं कि अंतरिक्ष से जो कबाड़ धरती की ओर गिरते हैं, उन्हें फिर से वायुमंडल में वापिस पहुँचा दिया जाए। इस नाते स्विट्जरलैंड के वैज्ञानिकों ने 'क्लीन स्पेस वन' नामक उपग्रह के निर्माण की घोषणा की है। इसका निर्माण स्विस स्पेस सेंटर द्वारा किया जा रहा है। इस पर करीब 1.1 करोड़ डॉलर खर्च आएगा। इसे तीन से लेकर 5 साल के भीतर तैयार करके प्रयोग किया जाएगा। इन वैज्ञानिकों का कहना है कि 10 सेंटीमीटर से बड़े आकार के 16,000 और इससे छोटे टुकड़े लाखों की संख्या में पृथ्वी के आस-पास चक्कर लगा रहे हैं। इनकी गति कई 100 किलोमीटर प्रति सेकेंड है। इस सफाई उपग्रह का आविष्कार होने के बाद सबसे पहले दो स्विस उपग्रहों को पकड़ने के लिए भेजा जाएगा। ये उपग्रह 2009 और 2010 में अंतरिक्ष में छोड़े गए थे, जो अब निष्क्रिय अवस्था में पड़े हैं, बहरहाल अंतरिक्ष में बढ़ता कबाड़ धरती के लिए मुसीबत का सबब बना हुआ है।

pramod.bhargava15@gmail.com

भारतीय विज्ञान के गौरवशाली क्षण

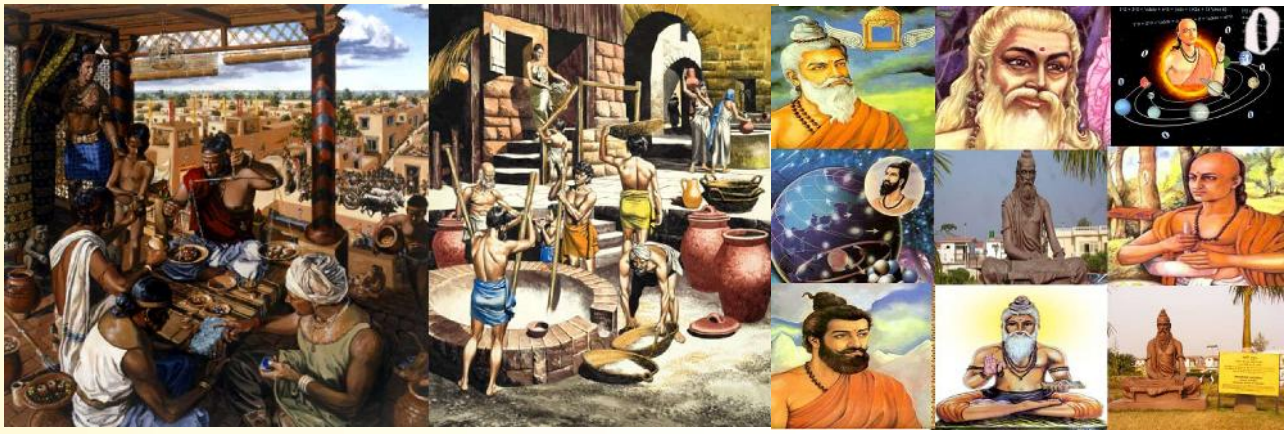

डॉ. कपूरमल जैन

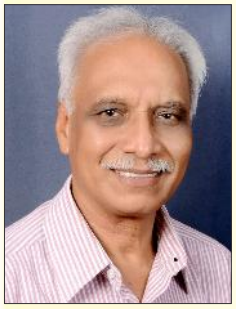

डॉ. कपूरमल जैन वरिष्ठ विज्ञान लेखक हैं। भौतिकी शास्त्र से संबंधित लेख लिखने में वे सिद्धहस्त हैं। घर-घर में विज्ञान जैसी लोकप्रिय शृंखला भी उन्होंने लिखी है। आण्विक भौतिकी के क्षेत्र में उन्होंने शोधकार्य किया है। अब तक 225 से अधिक लेख तथा 15 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकीं हैं। डॉ. कपूरमल जैन की लोक व्यापीकरण एवं विज्ञान की शिक्षण पद्धति में नवाचार लाने में गहरी रुचि है। वे भोपाल में निवास करते हैं तथा इस दिशा में कई वर्षों से कार्य कर रहे हैं।

आज जब हम विज्ञान के अध्ययन के साथ भारतीय विज्ञान के इतिहास को भी शामिल करने की बात करते हैं, तब इसकी आवश्यकता से जुड़े प्रश्न दिमाग में उठने लगते हैं। क्या इस वैज्ञानिक-इतिहास को पढ़ने से सचमुच ही अध्ययनकर्ताओं को लाभ मिल सकता है? क्या इसका अध्ययन आधुनिक विश्व-विज्ञान को नयी दिशा देने में सहायक हो सकता है?

इतिहास हमें विज्ञान के विकास के लिए विभिन्न आइडिया के जन्म लेने तथा उसके व्यवहारिक रूप में आने तक की घटनाओं से परिचित कराता है। यह वैज्ञानिकों द्वारा किये गये संघर्ष तथा उन्हें मिली चुनौतियों से भी परिचित कराता है। इससे पता चलता है कि विज्ञान का विकास सचमुच इतना सहज और सरल नहीं है, जैसा पाठ्यपुस्तकों में लिखा मिलता है। इन पुस्तकों से हमें विज्ञान की आभासी उथली जड़ों का तो पता चलता है, लेकिन संस्कृति में छिपी इसकी गहरी जड़ों का पता चल ही नहीं पाता है।

इतिहास हमें उन अज्ञात सांस्कृतिक जड़ों तक ले जाता है जिनसे आज का हमारा विज्ञान पोषित हो कर फल-फूल रहा है। इस जानकारी के अभाव में हमें वास्तविकता का बोध ही नहीं हो पाता है। आज के विज्ञान पाठ्यक्रमों को पढ़ते समय हमें हमारे विज्ञान की जड़ों के यूरोप में होने का संकेत मिलता है, जो वास्तविकता से परे है। अध्ययनकर्ताओं को यह समझ नहीं आता है कि वे जिस विज्ञान का अध्ययन कर रहे हैं, उसकी जड़ें भारत में ही गहराई तक फैली हुई हैं। इस जानकारी के अभाव में उन्हें लगता है जैसे हमारे यहाँ कुछ हुआ ही नहीं हैं। इससे उनके मन में 'हीन-भावना' पनपने लगती है। इस कारण इनमें 'मौलिक, नया तथा लीक से हट कर' करने के लिए आवश्यक आत्म विश्वास में कमी बनी रहती है। इतिहास का अध्ययन इस कमी को दूर करने में मदद कर उन्हें उत्साह से भरने में सहायक सिद्ध होता है।

विज्ञान की सांस्कृतिक जड़ें

आज अगर हम 'यूरोप के अध्ययन केंद्रों' पर नज़र डालते हैं तो वे अपने यहाँ के ज्ञान-विज्ञान की जड़ों से आरंभ करते हैं। उन्हें अपने विज्ञान की सांस्कृतिक जड़ें (कल्चरल रूट) ग्रीस में नज़र आती है, और इसी से वे अपने अध्ययन की शुरूआत करते हैं। लेकिन, हम अपने यहाँ ऐसा नहीं करते हैं। हमें विज्ञान का अध्ययन करते समय इसकी 'जड़ें' यूरोप में दिखाई देती हैं, न कि हमारे देश की संस्कृति में। इसका दुष्परिणाम हमारे यहाँ अध्ययनरत विद्यार्थियों के मन में हीन-भावना के पनपने के रूप में सामने आता है क्योंकि उन्हें लगता है कि 'हमारे यहाँ कुछ हुआ ही नहीं है'। जो कुछ भी हुआ है, वह यूरोप में ही हुआ है। यह आभास उनके आत्मविश्वास में कमी

लाता है, और कुछ भी नया कहने और करने से रोकता है। इस समस्या से उन्हें बचाने के लिए हमें अपने अध्ययन के दौरान भारतीय विज्ञान के गौरवशाली क्षणों के साथ ही हमारे देश की संस्कृति में ही इसकी जड़ों के काल की गहराई में छिपे होने की जानकारी देने की आवश्यकता है।

जिज्ञासा और विज्ञान

'विज्ञान' का सृजन 'जिज्ञासा' से होता है और, जिज्ञासा मानव की चरित्रगत विशेषता है। वह जहाँ भी रहता है और जिस काल में रहता है, जिज्ञासु बना रहता है। 'क्या', 'क्यों' और 'कैसे' जैसे प्रश्न उसके मन-मस्तिष्क में तैरते लगते हैं। लेकिन, उसकी जिज्ञासा देश-काल के अनुरूप पैदा होती है तथा उसी से प्रभावित होती है। जब मानव-जन्य विकास की शुरूआत भी नहीं हुई थी, तब मनुष्य के आसपास सिर्फ 'प्रकृति' थी। इसलिए अलग-अलग स्थानों पर विज्ञान की जड़ें अतीत में अलग-अलग गहराई में मिलती हैं। भारतीय उपमहाद्वीप में इसकी जड़ों के अत्यंत प्राचीनतम होने का प्रमाण पुरातत्त्वीय खोजों तथा हमारे यहाँ उपलब्ध ग्रंथों से मिलता है।

जब हमारे देश के ऋषियों-मुनियों ने अपने आसपास अस्त-व्यस्त और विविधता से भरे संसार में सममितताएं, नियमितताएं आदि देखीं तो वे हतप्रभ रह गये। लेकिन, उन्हें लगा कि निश्चित ही एक प्राकृतिक नियम होना चाहिये, जो सभी गतिविधियों के संचालन का कारण बनता होगा। ऐसा मानने के पीछे उनका हर चीज को देखने का वैज्ञानिक नज़रिया था। इसी नज़रिये ने उन्हें जिज्ञासु, सूक्ष्म अवलोकनकर्ता तथा खोजी बनाया। समग्र-दृष्टि से विचार करने के बाद उन्हें विश्व में सजीव-अजीव की उत्पत्ति में पंचभूतों (आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी) का योगदान नज़र आया। इसके बाद उन्होंने इनके गुणों को व्याख्यित किया और फिर विज्ञान गढ़ा। आइये, पहले हम इसकी पृष्ठभूमि पर विचार करते हैं।

विज्ञान के उद्गम की पृष्ठभूमि

प्रकृति के केंद्र में रहने के कारण हम अपने चारों ओर विविधता भरा प्राकृतिक परिवेश देखते हैं। हमें नदी-पहाड़, आकाश में विचरते ग्रह-नक्षत्र मिलते हैं। जमीन पर विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधे (वनस्पति जगत) मिलते हैं। हमें

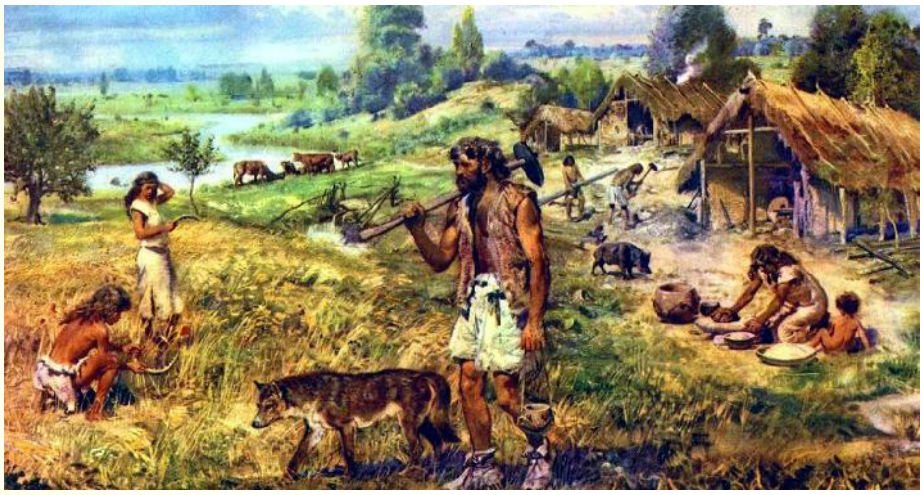

अपनी तर्क-जन्य स्वाभाविक वृत्तियों के कारण मानव की स्वाभाविक ही आवाज, सुगंध, स्वाद, शरीर को ऊर्जा देने वाले स्रोतों आदि तक पहुँच बनने लगी होगी। पदार्थों में भिन्नता, सुंदरता, रंगीनी, लचीलेपन, स्निग्धता, कड़ेपन, मजबूती, दृढ़ता, स्थायित्व के बारे में जिज्ञासाएँ जगने लगी होंगी। पशु-पक्षियों के व्यवहार व खानपान आदि की आदतों पर निगाह डालने से उसे भोज्य और अभोज्य की पहचान करने में मदद मिली होगी। `अग्नि' का पदार्थ पर प्रभाव देखने तथा उससे पदार्थों के गुणों को बदलते हुए देखने से उसे इच्छित गुणों वाले पदार्थों के निर्माण की तरकीब सूझी होगी।

विचरण करते पशु-पक्षी व अन्य जीव-जंतु मिलते हैं। हम अपनी इंद्रियों के माध्यम से प्रकाश, रंग, गंध, आवाज, स्वाद आदि से परिचित होते हैं। हम सूर्योदय व सूर्यास्त, दिन-रात, चंद्रमा का घटना-बढ़ना, ऋतु चक्र, जैसी नियमित घटनाएँ देखते हैं। यदाकदा आंधी-तूफान, बादलों में बिजली की चमक और गर्जना, सूर्यग्रहण व चंद्रग्रहण, ज्वालामुखी, दावानल, भूकम्प आदि जैसी यदाकदा घटने वाली घटनाएँ भी हमारे देखने में आती हैं। हमें बीज से पेड़-पौधे बनते हुए नज़र आते हैं तो ये हमें अगली पीढ़ियों के निर्माण के लिए बीज तैयार होते हुए भी मिलते हैं। हमें धरती के अंदर धातु, कोयला आदि का खनिज के रूप में खजाने मिलते हैं। हमें कई पदार्थ अपना रूप बदलते हुए भी मिलते हैं। अनुभव के दौरान हमें प्रकृति में व्याप्त परस्पर-निर्भरता के दर्शन होते हैं। प्रकृति में घटने वाली कई घटनाएँ जिस तरह हमें आज चमत्कृत करती हैं, उसी तरह तत्कालीन मानव को भी करती रही होंगी। आज की बात अलग है लेकिन, सभ्यता के आरंभिक काल में, प्रथम दृष्ट्या, कई घटनाएँ उसे समझ से बाहर लगी होंगी। उन घटनाओं को वह दैविक घटनाएँ मानने लगा होगा। लेकिन, दिमाग पर जोर लगाने के बाद कुछ घटनाएं उसे समझ में आने योग्य लगी होंगी। इसतरह उसके सामने दो प्रश्न खड़े हुए होंगेः प्रकृति क्यों है तथा प्रकृति कैसे काम करती है?

पहले प्रश्न का उत्तर मिलना उसे तर्क से परे लग रहा होगा, अतः उसने 'भगवान' की कल्पना की होगी तथा प्रकृति के अस्तित्व में होने का कारण उसे माना होगा। लेकिन, दूसरे प्रश्न के उत्तर की तलाश उसे 'तर्क के क्षेत्र' में ले गयी होगी। इससे 'विज्ञान' का स्वाभाविक जन्म हुआ होगा। और, तर्क के साथ आगे बढ़ने में उसकी स्वाभाविक वृत्तियों का जबर्दस्त योगदान रहा होगा।

मनुष्य की तर्क और भावनाओं से जुड़ी विशिष्ट वृत्तियाँ और प्रयास देश-काल से परे होती हैं, लेकिन इनका विकास और प्रयासों की तीव्रता देश-काल पर निर्भर होती है।

मनुष्य की स्वाभाविक वृत्तियाँ

मनुष्य की स्वाभाविक वृत्तियों में जीवन चलाने व बचाने के लिए प्रयत्नशील रहना; अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु घूमना; गहराई से प्रकृति के संचालन और घटनाओं को जानने के लिए जिज्ञासु होना; आकर्षण और विकर्षण के भावों को महसूस करना और उनको प्रकट

1921 में एक पुरातत्त्वीय खुदाई के दौरान `सिंधु घाटी सभ्यता' या `हड़प्पन सभ्यता' की खोज हुई। इससे पता चला कि हमारी यह सभ्यता कितनी प्राचीन है! यह `कांस्य युगीन सभ्यता' 3300 से 1300 ईसा पूर्व के बीच की कालावधि की है। इसके बाद वी.एस. वाकणकर ने 1957 में `भीमबेटका' की गुफाओं की खोज की। इन गुफाओं में बनी सबसे पुरानी `पेंटिंग' आज से करीब 30 हजार साल पुरानी है।

करना; मन और स्वास्थ्य को जो अच्छा लगे, उस ओर आकृष्ट होना, देखना, सुनना, और जो रूचिकर लगे उस पर विशेष ध्यान देना; पैटर्न, नियमितता, सममिति, रंग, खुशबू आदि को संकेतों के रूप में ग्रहण करना; सोचना, विश्लेषण करना; कल्पना करना, नकल करना तथा सृजन करना आदि रही हैं।

अब हम कड़ियों को जोड़ने का प्रयास कर देखते हैं कि किस तरह विज्ञान का जन्म हुआ तथा तर्क तथा 'क्या नहीं', 'क्यों नहीं' और 'कैसे नहीं' जैसे प्रश्नों के उठने से तकनीकी अनुप्रयोगों का रास्ता निकला।

विज्ञान का जन्म तथा तकनीकी अनुप्रयोगों हेतु रास्ता

अपनी तर्क-जन्य स्वाभाविक वृत्तियों के कारण मानव की स्वाभाविक ही आवाज, सुगंध, स्वाद, शरीर को ऊर्जा देने वाले स्रोतों आदि तक पहुँच बनने लगी होगी। पदार्थों में भिन्नता, सुंदरता, रंगीनी, लचीलेपन, स्निग्धता, कड़ेपन, मजबूती, दृढ़ता, स्थायित्व के बारे में जिज्ञासाएँ जगने लगी होंगी। पशु-पक्षियों के व्यवहार व खानपान आदि की आदतों पर निगाह डालने से उसे भोज्य और अभोज्य की पहचान करने में मदद मिली होगी। 'अग्नि' का पदार्थ पर प्रभाव देखने तथा उससे पदार्थों के गुणों को बदलते हुए देखने से उसे इच्छित गुणों वाले पदार्थों के निर्माण की तरकीब सूझी होगी। अग्नि के प्रभाव में मिट्टी को पत्थर बनते हुए देखने से मिट्टी के बर्तन बनने की तकनीकी संभावना दिखाई दी होगी। खुदाई के दौरान धरती के अंदर छिपे कुछ खनिजों के मिलने तथा अग्नि के प्रभाव में उनसे मिलने वाली धातुओं ने उन्हें मिट्टी का विकल्प दिखाई दिया होगा। प्राकृतिक आपदाओं से जान-माल की हानि से बचने हेतु व्यवस्था करने तथा वन्य-हिंसक पशुओं और अन्य हानि पहुँचाने वाले प्राणियों से बचने तथा मुकाबला करने के लिए 'अस्त्र-शस्त्र' की आवश्यकता महसूस कराई होगी। एक स्थान से दूसरे स्थान तक आने जाने में सुविधा के लिए 'आवागमन के साधनों' को विकसित करने को प्रेरित किया होगा। नदियों में 'तैरती लकड़ी' को देख कर 'नावें तथा जहाज' बनाने का आइडिया दिया होगा। दो स्थानों के बीच की दूरी तथा विभिन्न घटनाओं के बीच की कालावधि जानने की जरूरत ने उसे 'गणित' की आवश्यकता महसूस कराई गयी होगी।

खाने-पीने, सूंघने, देखने व सुनने के साथ ही विचारों के शरीर और उसकी क्रियाशीलता पर प्रभाव उसके संज्ञान में आये होंगे। इस तरह स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले मानसिक और भौतिक कारणों को जानने के बाद इनके उपचार हेतु 'औषधि या अन्य उपायों' को खोजने के लिए उसे प्रेरित किया होगा। धीरे-धीरे उसे बेहतर तथा सुरक्षित जीवनयापन की तलाश में उपयुक्त संसाधनों के चयन तथा उन्हें अपनी जरूरत के हिसाब से बदलने की अपनी क्षमता पर भरोसा होने लगा होगा। इसके बाद उसे संकेतों के आधार पर अपने बेहतर भविष्य के निर्माण हेतु 'तर्क-यात्राएं' आरंभ करना तथा उन्हें परिणामोंमुखी बनाने में मजा आने लगा होगा। उसके इन प्रयासों से 'विज्ञान' का जन्म हुआ होगा तथा 'तकनीकी अनुप्रयोगों' का रास्ता बनने लगा होगा।

हमारे कदमों के आगे बढ़ने में हमारी 'मेंटल नेटवर्क' का बहुत योगदान होता है। हमारे आसपास बहुत कुछ होता है और घटते हुए दिखाई देता है। लेकिन, हमारे 'मेंटल नेटवर्क' में क्या आता है तथा क्या टिकता है, यह महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इसी से हमारे भविष्य की दिशा तय होती है। आगे बढ़ने के विचार के साथ ही हमारी दृष्टि हमारे अतीत पर जाती है और चूँकि 'इतिहास' से हमारा स्वाभाविक लगाव और जुड़ाव होता है, अतः हम अपने 'इतिहास' की ओर देखने लगते हैं।

हमारा 'इतिहास', हमारी 'प्रज्ञा-माँ' (Intellectual mother) की तरह होता है। 'इतिहास' हमें अपने प्राचीन ग्रंथों के माध्यम से अपनी 'संस्कृति की जड़ों' की ओर ले जाता है।

भारत में ज्ञान-विज्ञान की जड़ें

भारत में आज भी वेद-पुराण जैसे कई प्राचीन ग्रंथ उपलब्ध हैं। लेकिन, हमारा प्राचीन ज्ञान-विज्ञान जिस भाषा और शैली में है, वह समझ के स्तर पर कठिनाई पैदा करता है। अक्सर हम देखते हैं कि आसानी से हो सकने वाले 'शाब्दिक-अनुवाद' काम नहीं आते हैं, क्योंकि उसमें कई 'गूढ़ार्थ' निहित होते हैं। अतः हमें उसके भावानुवाद की जरूरत पड़ती है। कई बार प्रचलित अर्थ रूढ़ियों को जन्म देती है। और, तर्क-रहित, लेकिन आस्था में डूबी व्याख्याएं 'कर्मकाण्ड' की ओर ले जाती हैं। ऐसे में ज्ञान-विज्ञान का तर्क को आधार मान कर पुनर्व्याख्यित करना जरूरी होता है। इसके बाद ही हम अपने ज्ञान-विज्ञान की जड़ों को देख

सकते हैं। अगर बिना पुनरव्याख्यायित किये हम अपने विद्यार्थियों तक इसे पहुँचाते हैं तो वैज्ञानिक दृष्टि से इसका अपेक्षित लाभ नहीं मिल सकता है। यह एक प्रकार से 'ट्रैनिंग-लॉस' साबित होता है। सच तो यह है कि आज सिर्फ कथनों, किस्सों और कहानियों पर विश्वास जमना कठिन होता है। अतः हमें हमारे प्राचीन ज्ञान-विज्ञान को नयी दृष्टि से देखने के साथ ही उसके अंदर छिपे गहरे अर्थों को खोज कर विद्यार्थियों के सामने रखने की जरूरत होती है ताकि, वे सिर्फ अपने को गौरवांवित ही महसूस न करें, बल्कि उन्हें सूत्र मानते हुए कुछ नया सृजित करने को प्रेरित भी हो सकें। इसके लिए प्राचीन भारत में उपलब्ध ज्ञान-विज्ञान में 'लय और प्रवाह' लाने के लिए 'खोयी कड़ियों' को खोजने तथा प्राप्त सभी कड़ियों को तर्कपूर्ण तरीके से जोड़ने की जरूरत पड़ती है। सौभाग्य से आचार्य प्रफुल्लचंद्र राय, प्रो.बी.एन. सील आदि जैसे विद्वानों ने प्राचीन ग्रंथों का अध्ययन कर प्राचीन भारत में छिपी विज्ञान की जड़ों को खोज निकाला। इसके साथ ही धर्मपाल ने उन देशज तकनीकों और प्रौद्योगिकियों के प्रामाणिक विवरण प्रस्तुत किये हैं, जो अंग्रेजों के आने के पहले से ही हमारे देश में प्रचलन में थे। कुछ वर्षों के पहले श्री रामनिवास आर्य तथा श्री रामप्रसाद ने प्राचीन भारत में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी को सरल व सुगम हिंदी भाषा में उपलब्ध कराया है। डॉ. एन.जी. डोंगरे ने 'वैशेषिका दर्शन' की गणितीय व्याख्या कर अद्‌भूत कार्य किया है। भारत में ज्ञान-विज्ञान की जड़ों की गहराई का पता लगाने में पुरातत्त्वीय खुदाई के दौरान सिंधु घटी की सभ्यता की खोज की भी अहम भूमिका रही है।

प्राचीन भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी

जब हम अपने 'अतीत' और 'विश्व-इतिहास' पर नज़र डालते हैं तो हमें भारत के साथ इराक, चीन, मिश्र, युनान आदि नज़र आते हैं। लेकिन, भारत सबसे आगे और अलग मिलता है। प्राचीन भारत के विज्ञान में 'वस्तुपरक' और 'व्यक्तिपरक' दोनों ही दृष्टियाँ अनिवार्य रूप से मौजूद रही हैं। यही कारण रहा कि हमारे यहाँ 'भौतिक' तथा मनुष्य का 'आंतरिक' दोनों ही प्रकार का विकास नजर आने लगा।

1921 में एक पुरातत्त्वीय खुदाई के दौरान 'सिंधु घाटी सभ्यता' या 'हड़प्पन सभ्यता' की खोज हुई। इससे पता चला कि

मुगलों के आने के बाद से स्थितियाँ बिगड़ती चली गयी। हालांकि, यदि दो भिन्न संस्कृतियों के टकराव से उत्पन्न हुई कुछ समस्याओं को अगर हम छोड़ दें तो इतिहास ने इन संस्कृतियों के मिलन के कुछ सुखद क्षणों को भी अपने पन्नों में सजाया है। 'भारतीय स्थापत्य-कला' में नए आयामों का जुड़ना, इस बात का जीता-जागता प्रमाण है।

हमारी यह सभ्यता कितनी प्राचीन है! यह 'कांस्य युगीन सभ्यता' 3300 से 1300 ईसा पूर्व के बीच की कालावधि की है। इसके बाद वी. एस. वाकणकर ने 1957 में 'भीमबेटका' की गुफाओं की खोज की। इन गुफाओं में बनी सबसे पुरानी 'पेंटिंग' आज से करीब 30 हजार साल पुरानी है। पेंटिंग में 'वनस्पति तथा खनीजों के रंग' प्रयुक्त किये गये हैं, जो आज तक फीके नहीं पड़े हैं। इनके अलावा नष्ट होने से बचे रह गये 'भोजपत्रों' पर लिखी पांडुलिपियाँ, वेद और पुराण जैसे प्राचीन ग्रंथ, वर्तमान में चल रही पुरातत्वीय खनन गतिविधियाँ (महाभारत-कालीन रथ के प्रमाण) और यदाकदा घुमंतकों को मिले 'जीवाश्म' आदि के अध्ययन इस बात का प्रमाण दे रहे हैं कि भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की जड़ें काल के अतीत में बहुत गहराई तक छिपी हुई हैं।

अवशेषों के सही और विश्वसनीय काल-निर्धारण करने में प्रकृति में चल रही 'रेडियोधर्मी घड़ियों' तथा अन्य उन काल-खंडों

में घटी विभिन्न 'ऐतिहासिक तथा प्राकृतिक घटनाओं के साथ मिलान' की अहम भूमिका रही। 'कार्बन-घड़ी' का 'अर्द्ध-आयु काल' 5700 वर्ष होता है। 'अर्द्ध-आयु काल' से तात्पर्य किसी नमूने में उपस्थित 'रेडियो-कार्बन' के कुल मात्रा के क्षय हो कर आधा होने तक का समय से होता है।

पुरातत्त्वीय खुदाई के दौरान मिले साक्ष्यों के आधार पर पता चला है कि हमारे यहाँ विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की शुरूआत 'वैदिक काल' से ही हो गयी थी। भारत में उपलब्ध ग्रंथों और इतिहास के अध्ययन से पता चला कि हमारे यहाँ मौर्य, शक, कुषाण, और गुप्त राजाओं के शासनकाल में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी अपने चरमात्कर्ष पर थी। यह भी पता चला कि ईसा के सैंकड़ों वर्ष पूर्व और बाद में ज्ञान-विज्ञान के केंद्रों के रूप में नालंदा (लगभग 500 वर्ष पूर्व), तक्षशिला (लगभग 600 वर्ष पूर्व से), विक्रमशिला (783-820 ई.) जैसे विश्वविद्यालय बने थे। इसके बाद 1199 में धर्मांध इख्तियारूद्दीन मुहम्मद बिन बख्तियार खिलजी ने दुर्भावनावश ज्ञान-विज्ञान के इन केंद्रों को नष्ट कर डाला। उसने जिस नालंदा विश्वविद्यालय को जला कर नष्ट किया था, वह चौथी से 11वीं शताब्दी तक अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विश्वविद्यालय था। इससे दुर्लभ पुस्तकें तथा कई दस्तावेज जल कर खाक हो गये। इसके बाद ज्ञान-विज्ञान के बुरे दिन आरंभ हो गये।

प्राचीन ग्रंथों तथा तथा पुरातत्त्वीय खोजों के अकाट्य प्रमाणों के आधार पर हमें पता लगा कि जब यूरोप सो रहा था तब हमारे देश में गणित के क्षेत्र में अद्‌भूत कार्य हो रहा था। हमारे यहीं 'शून्य' की अवधारणा रखी गई; 'अंकों के स्थानीय मान की पद्धति' विकसित की गयी; दशमलव, वर्गमूल, घनमूल, घातांक आदि को ज्ञात करने की विधियाँ खोजी गयी; समस्याओं के हल के लिए रेखागणित, बीजगणित और कलन को विकसित किया गया; शहरों के नियोजित विकास पर ध्यान दिया गया; आवागमन को सुगम बनाने के लिए सड़कें, पूल, बंदरगाह, जलपोत निर्माण और नौचालन आदि विकसित किये गये; खेती के लिए सिंचाई के साधन विकसित किये गये; सुरक्षा के लिए किलों का निर्माण किया गया; सूती, रेशमी और उनी वस्त्रों के निर्माण की तकनीकें खोजी गयी; रसायनों को प्राप्त करने की तकनीकें विकसित

की गयीं; खनीजों से धातुओं को प्राप्त करने की विधियाँ खोजी गयीं तथा उन्हें इच्छित गुणों वाला बनाने के लिए 'मिश्र-धातुओं' में बदलने की तकनीकें खोजी गयीं; 'बरतन और मूर्ति निर्माण' के लिए मिट्टी, पत्थर, लकड़ी, ताम्बे, जस्ते आदि के अनुप्रयोग किये गये; पेंटिंग, चित्र-कला आदि को प्रोत्साहन दिया गया; मंदिरों, किलों, महलों आदि के निर्माण में मजबूती के साथ ही सुंदरता का भी ध्यान रखा गया।

अब अगर विश्लेषण करें तो अंग्रेजों के हमारे देश में आने के पहले हमारे प्राचीन ज्ञान-विज्ञान के विकास के दौरान वे विज्ञान के सभी मूल विषय यथा, रसायनिकी, गणित, खगोलिकी, भौतिकी, कृषि, वनस्पति विज्ञान, आयुर्वेद और सर्जरी व चिकित्सा के साथ ही प्रौद्योगिकी से जुड़े विविध क्षेत्र यथा, औजार व हथियार निर्माण, खनिज की प्राप्ति तथा धातु निष्कर्षण की तकनीक (दिल्ली की कुतुब मिनार के पास जंगरहित लोह स्तंभ), सिविल इंजीनियरिंग (स्थापत्य कला और किले, भवन व पूजा स्थलों का निर्माण, शहर नियोजन तथा तालाब, बावड़ियों जैसे जल स्रोतों का निर्माण), कृषि प्रौद्योगिकी एवं पशु पालन, वस्त्र कला, आभूषण तथा मुद्रा-निर्माण कला, पात्र कला, आवागमन के साधन, बैल-गाड़ी, ऊँटगाड़ी जहाजरानी और नौ-परिवहन, वाद्ययंत्र निर्माण आदि सभी मिल जाते हैं, जिनका हम आज अध्ययन करते हैं।

इस तरह विभिन्न खोजों के दौरान हमें कई पुख्ता प्रमाण मिले जिन्होंने हमारे खोये अतीत से पुनः हमारा परिचित कराया। इससे हमें अपने प्राचीन भारत में हुई विज्ञान-विकास की यात्रा का संज्ञान कराया, जिससे हमें पता चला कि हम यूरोप से कई मामलों में बहुत आगे रहे हैं। हमें जान कर यह गर्वानुभूति होने लगी कि अब तक हम जो जान रहे और पढ़ रहे थे कि विश्व-विज्ञान के विकास में हमारा योगदान कभी रहा ही नहीं और जो कुछ इस क्षेत्र में आज नज़र आ रहा है, उसमें सिर्फ यूरोप की ही भागीदारी है, वह भ्रामक तथा अधूरा है।

हम भूले अपना प्राचीन ज्ञान-विज्ञान

मुगलों आने के बाद से स्थितियाँ बिगड़ती चली गयी। हालांकि, यदि दो भिन्न संस्कृतियों के टकराव से उत्पन्न हुई कुछ समस्याओं को अगर हम छोड़ दें तो इतिहास ने इन संस्कृतियों के मिलन के कुछ सुखद क्षणों को भी अपने पन्नों

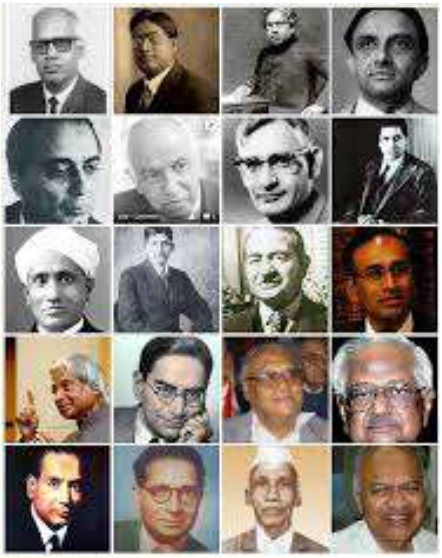

जब देश में वैज्ञानिक वातावरण बनने लगा, तब विज्ञान में कैरियर बनाने के लिए कई प्रतिभाशाली युवा सामने आने लगे। उन्होंने देश की सेवा विज्ञान के माध्यम से करने का संकल्प लिया। इनमें जगदीशचंद्र बसु, पी.सी. रे, सी.वी. रमन, मेघनाद साहा, एस.एन, बोस, होमी भाभा, बीरबल सहानी, शांतिस्वरूप भटनागर आदि थे।

में सजाया है। 'भारतीय स्थापत्य-कला' में नए आयामों का जुड़ना, इस बात का जीता-जागता प्रमाण है।

मुगलों के बाद देश में 'व्यापार' के उद्देश्य से पुर्तगाली, डच, फ्रेंच और ब्रिटिश आये। इस काल में भारतीय विज्ञान की अपूरणीय क्षति होने लगी। 18वीं शताब्दी आते-आते तो लोग अपना 'गौरवशाली ज्ञान-विज्ञान से भरा अतीत' बिल्कुल ही भूल गये। हम अपनी परम्पराओं में सिर्फ अंधविश्वासों, कर्मकाण्डों तथा रूढ़ियों को ही शामिल करने लगे।

अंग्रेजों के आगमन के समय देश की लगभग 25 प्रतिशत आबादी विभिन्न औद्योगिक कार्यों में लगी थी और इनसे जो माल तैयार होता था वह गुणवत्ता और लागत के मामले में किसी भी अन्तर-राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा के योग्य था। अंग्रेजों ने इस 'देशज औद्योगिक ढ़ाँचे' को तोड़ा और जनता को सिर्फ 'खेती' की ओर मोड़ कर उनकी अन्य आवश्यकता की स्वदेशी-पूर्ति को बाधित कर परालम्बी बनाने में कुचक्र से भरी भूमिका निबाही। इसका प्रामाणिक विवरण श्री धर्मपाल की पुस्तक 'इंडियन साईंस एण्ड टेक्नॉलॉजी इन दी एटीन्थ सेंचुरी' में मिलता है। यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण शोध-परक पुस्तक हैं जिसमें 'फिलॉसाफिकल टांजेक्शन्स ऑफ द रायल सोसायटी ऑफ लंदन', 'टांजेक्शन्स ऑफ द रायल सोसायटी ऑफ एडीनबरा', 'ब्रिटिश म्यूजियम' और और अन्य स्थानों पर उपलब्ध प्रामाणिक सामग्रियों का यथा-संभव उपयोग किया है। इसके अनुसार आज से करीब दो सौ साल पहले तक भारत की गिनती विश्व के महत्वपूर्ण 'औद्योगिक देशों' में होती थी न कि मात्र 'कृषि-प्रधान देशों' में।

सैकड़ों वर्षों की गुलामी ने न सिर्फ हमारी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति को धूमिल किया, वरन् हमारे आत्मविश्वास को ध्वस्त कर हमारी सृजनशील प्रवृत्ति को भी नष्ट कर डाला। पराधीनता का विचार हमारे मन में इतनी गहराई तक बैठ गया कि हमारी सभ्यता से जुड़े हर पहलू मृतप्राय हो गए। लेकिन, जब अंग्रेजों के शासन काल में लोगों पर अत्याचार बहुत बढ़ने लगे और लोगों की जीना दुभर हो गया, तब 1857 में पहला स्वतंत्रता-संग्राम आरंभ हुआ। इसने लोगों को जगाया। वैसे यह संग्राम सफल तो नहीं हो पाया लेकिन, इसने लोगों के मन में यह विश्वास पैदा कर दिया कि शक्तिशाली अंग्रेजों से मुकाबला किया जा सकता है।

स्वतंत्रता मिलने के पहले ही बना वातावरण

1857 के स्वतंत्रता संग्राम के बाद अंग्रेज डर गये और सचेत हुए। वे 'भारतीय भाषाओं' के स्थान पर 'अंग्रेजी' को बढ़ावा देने लगे ताकि, शासन चलाने में भारतीयों की भागीदारी बढ़ाई जा सके। अंग्रेजों ने कलकत्ता, बम्बई तथा मद्रास में विश्वविद्यालय तथा कॉलेज खोले। इसके अंतर्गत खोले गये कलकत्ता में मेडिकल कॉलेज ऑफ बेंगाल और सेंट झेवियर कालेज, कलकत्ता तथा मद्रास में प्रेसिडेंसी कॉलेज प्रमुख हैं। इस तरह देश के युवाओं को उच्च-अध्ययन की सुविधा मिलने लगी। इसके बाद कई प्रतिभाशाली युवाओं के लिए यूरोप जाने का रास्ता भी खुला। यहाँ उन्हें यूरोप की प्रगति को देखने और जानने से पता चला कि यूरोप नये विज्ञान का केंद्र है। इधर, भारत में रहते

हुए महेंद्रनाथ सरकार ने मेडिकल कॉलेज से पढ़ाई पूरी की। इस दौरान उन्होंने महसूस किया कि भारतीय पारंपरिक चिकित्सा पद्धति और औषधियाँ यूरोपीय चिकित्सा पद्धति और औषधियाँ दवाओं से कहीं अधिक बेहतर है। इसकी उन्होंने अपने साथियों तथा ब्रिटिश गुरूओं से भी चर्चा की। सभी उनसे सहमत हुए। अब उन्होंने भारतीय औषधियों को और अधिक मजबूत वैज्ञानिक आधार देने के निश्चय किया तथा 'इंडियन जर्नल ऑफ मेडिसन' का प्रकाशन आरंभ किया। इसके बाद उन्होंने एक ऐसा संस्थान स्थापित करने का सपना देखा, जहाँ भारतीय युवाओं को ऐसा वातावरण उपलब्ध हो सके जहाँ वे विश्व-स्तरीय वैज्ञानिक अनुसंधान कर सके। उनका सपना 'इंडियन एसोशिएशन फार कल्टीवेशन ऑफ साइंस' के रूप में साकार हुआ। उन्होंने इसे वास्तविक आजादी के लिए एक कुंजी के रूप में देखा। उन्होंने महसूस किया कि ऐसा कर हम अंग्रेजों को यह दिखाना चाहते हैं कि भारतीय मेधा उनसे कम नहीं है। इसी जगह काम करते हुए सी.वी.रमन ने महेंद्रनाथ सरकार को सही साबित किया।

देश की सेवा विज्ञान के माध्यम से

जब देश में वैज्ञानिक वातावरण बनने लगा, तब विज्ञान में कैरियर बनाने के लिए कई प्रतिभाशाली युवा सामने आने लगे। उन्होंने देश की सेवा विज्ञान के माध्यम से करने का संकल्प लिया। इनमें जगदीशचंद्र बसु, पी.सी. रे, सी. वी. रमन, मेघनाद साहा, एस.एन, बोस, होमी भाभा, बीरबल सहानी, शांतिस्वरूप भटनागर आदि थे।

इन वैज्ञानिकों नये विज्ञान में बिना सुविधा तथा प्रोत्साहन के बल पर जो कर के दिखाया, उसने साबित कर दिया कि भारतीय प्रतिभा किसी से कम नहीं है। इसने देश में अनुसंधान का एक जबर्दस्त वातावरण बनाया।

स्वतंत्रता के बाद अनुसंधान को गति देने के लिए बिछा संस्थाओं का जाल

स्वतंत्रता मिलने के बाद सिफर से शिखर तक पहुँचने का रोडमेप तैयार किया ताकि देश आत्मनिर्भरता की ओर कदम बढ़ाते हुए विज्ञान की मदद से लोगों के जीवन में खुशहाली ला सके। इसके अंतर्गत देश में राष्ट्रीय वैज्ञानक प्रयोगशालाओं की एक शृंखला खड़ी की। परमाणु ऊर्जा, अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी, भौतिकी,

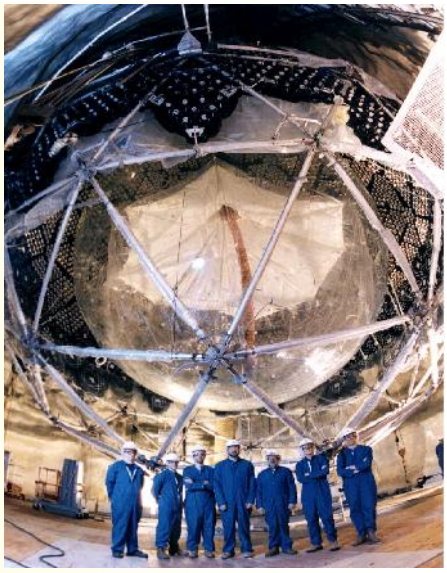

देश में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर आपसी सहयोग से आगे बढ़ने के लिए `लीगो-इंडिया' तथा `न्यूट्रिनो बेस्ड ऑब्जर्वेटरी' का निर्माण-कार्य चल रहा है। `नाभिकीय संलयन' पर आधारित एक महत्त्वाकांक्षी प्रोजेक्ट आई.टी.ई.आर. में हमारे देश की भागीदारी है। इस तरह आज देश के पास आगे बढ़ने के लिए जबर्दस्त `मोमेंटम' है।

रसायन, जीव विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, गणित, खगोल विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, जैव प्रौद्योगिकी, सामुद्रिक विज्ञान, सूचना प्रौद्योगिकी आदि सभी क्षेत्रों में विश्व स्तर पर महसूस की जा रही हमारी पहचान इसी का परिणाम है। इस रोडमेप के लिए आवश्यक नीति निर्धारण के लिए नेहरू, परमाणु कार्यक्रम के लिए होमी भाभा तथा सी.एस.आय.आर. के माध्यम से देश में वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए संस्थाओं का जाल बिछाने के लिए शांतिस्वरूप भटनागर आगे आये। अतः आरंभिक 'मोमेंटम' सेट करने में 'नेहरू-भाभा-भटनागर प्रभाव' का विशेष योगदान रहा। आज देश में सी.एस. आइ.आर की कई प्रयोगशालाएं तथा क्षेत्रीय केंद्र संचालित हैं। यह संस्था कई संस्थानों, विश्वविद्यालयों तथा निजी कम्पनियों को वैज्ञानिक अनुसंधान में मदद करती है। देश की प्रसिद्ध संस्थाओं में बी.ए.आर.सी. ट्राम्बे, टी. आय.एफ.आर. मुम्बई, इसरो, डीआरडीओ, आयुका, राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला नईदिल्ली, साहा इंस्टीट्यूट ऑफ न्युक्लियर फिजिक्स, प्लाज्मा रिसर्च इंस्टीट्यूट, अहमदाबाद, राजा रामन्ना सेंटर फॉर एडवांस्ड टेक्नॉलॉजी, इंस्टीट्यूट ऑफ मैथेमेटिकल साइंसेस, इंस्टीट्यूट ऑफ फिजिक्स, केंसर रिसर्च इंस्टीट्यूट, हरिश्चंद्र रिसर्च इंस्टीट्यूट, राष्ट्रीय समुद्रविज्ञान संस्थान गौआ, राष्ट्रीय भू-भौतिकी अनुसंधान संस्थान हैदराबाद, केंद्रीय वैज्ञानिक उपकरण संस्थान चंडीगढ़, केंद्रीय इलेक्ट्रॉनिक अभियांत्रिकी अनुसंधान संस्थान, पिलानी, राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला पुणे, भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला अहमदाबाद, सी.ई.सी. आर.आय. कराईकुडी, बोस इंस्टीट्यूट कलकत्ता (कोलकाता), एस.एन. बोस नेशनल सेंटर फॉर बेसिक साइंसेस, इंडियन एसोशिएशन फॉर कल्टीवेशन ऑफ साईंस, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एस्ट्रोफिजिक्स, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ ज्योमेग्नेटिज्म, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, रमन रिसर्च इंस्टीट्यूट, वाडिया इंस्टीट्यूट ऑफ हिमालयन जियोलॉजी, बीरबल सहानी इंस्टीट्यूट ऑफ पैलियोबॉटनी, आदि प्रमुख हैं। समय-समय पर देश में डी. एस.टी., राष्ट्रीय दूरसंवेदन एजेंसी, पर्यावरण विभाग, महासागर विकास, गैर-परम्परागत ऊर्जा विभाग भारतीय मौसम विभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर), नेशनल सेंटर फार प्लांट-जीनोम रिसर्च, नेशनल ब्रेन रिसर्च सेंटर, नेशनल बायो-रिसोर्स डेवलपमेंट बोर्ड आदि स्थापित किये गये।

वैज्ञानिकों ने किये विश्व को चकित कर देने वाले कार्य

स्वतंत्रता मिलने के बाद हमारे देश के वैज्ञानिकों ने कई ऐसे कार्य किये हैं, जो प्रथमदृष्ट्या कल्पनातीत लगते हैं। हमारी वर्तमान 'चंद्रयान' तथा 'मंगल यान (मॉम)' जैसी अंतरिक्ष परियोजनाओं की सफलताओं ने विश्व को दाँतो तले उंगली दबाने पर विवश किया है। यह टीम के रूप में हमारी सफलता देश को नेतृत्व देने वाले देशों की शृंखला में खड़ा करने का अनुपम प्रयास है। इसके बाद हाल ही में 104 उपग्रहों को एक साथ अंतरिक्ष में स्थापित करने का हमने विश्व रिकार्ड बनाया है। इसरो ने अगस्त 2018 को अपने 'गगनयान प्रोजेक्ट' की घोषणा की है, जिसके अनुसार सन् 2022 तक मानव को अंतरिक्ष में भेजने का संकल्प है। एंटार्कटिका की खोज से जुड़े प्रोजेक्ट में हमने उल्लेखनीय कार्य कर रहे हैं।

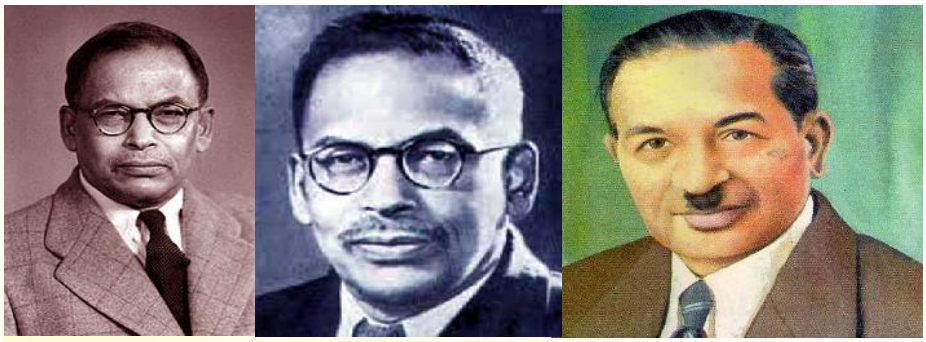

जब इतिहास के माध्यम से युवा जानेंगे कि शांतिस्वरूप भटनागर, मेघनाद साहा, सत्येन्द्र नाथ बोस आदि ने विज्ञान के क्षेत्र में अपना क्रांतिकारी योगदान दिया था तो वे विषयों को नये तरीके से देखना सीखेंगे। जब वे विपरीत परिस्थितियों में संघर्ष करते हुए हमारे देश के कई वैज्ञानिकों के जीवन से जुड़ी घटनाओं को पढ़ेंगे तो उन्हें प्रत्यक्ष दिखाई देने वाली अपनी कठिनाइयाँ छोटी नज़र आने लगेगी।

आज देश न्युक्लियर क्लब, स्पेस क्लब तथा एंटार्कटिका एक्सप्लोरेशन क्लब का सम्माननीय सदस्य है तथा विज्ञान के क्षेत्र में विश्व-शक्ति के रूप में तेजी से उभर रहा है। विभिन्न अग्र क्षेत्रों जैसे, 'कन्डेंस्ड मैटर फिजिक्स' में प्रो. अजीत सूद, 'स्ट्रिंग सिद्धांत' में प्रोफेसर अशोक सेन, 'पदार्थ विज्ञान' में भारतरत्न सी.एन.आर. राव, 'हेजा (कॉलेरा)' पर शंभूनाथ डे, 'प्रोटिन संरचना' में जी.एन. रामचंद्रन, 'इन-विट्रो फर्टिलाइजेशन' पर सुभाष मुखोपाध्याय, 'गणित' में एम.एस. रघुनाथन, एम.एस. नरसिंह्न तथा मणिन्द्र अग्रवाल आदि के नाम उल्लेखनीय उपलब्धियाँ दर्ज हैं। इसतरह व्यक्तिगत स्तर पर हम पहले भी अपनी छाप छोड़ते रहे हैं, आज भी छोड़ रहे हैं और आगे भी छोड़ते रहेंगे।

हाल ही में खोजी गयी गुरूत्वीय तरंगों की खोज में भी भारत का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। मापनयोग्य इन तरंगों की उत्पत्ति ब्लेक होल अथवा न्यूट्रॉन तारों के बीच होने वाली टक्करों से होती है। हमारे देश के वैज्ञानिकों ने ब्लेकहोल तारों के बीच होने वाली टक्करों की सैद्धांतिक समझ को विकसित किया तथा टक्कर के दौरान प्राप्त सिग्नलों के विश्लेषण हेतु आवश्यक अल्गारिदम (Algarithm) को डिज़ाइन किया।

देश में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर आपसी सहयोग से आगे बढ़ने के लिए 'लीगो-इंडिया' तथा 'न्यूट्रिनो बेस्ड ऑब्जर्वेटरी' का निर्माण-कार्य चल रहा है। 'नाभिकीय संलयन' पर आधारित एक महत्त्वाकांक्षी प्रोजेक्ट आई. टी.ई.आर. में हमारे देश की भागीदारी है। इस तरह आज देश के पास आगे बढ़ने के लिए जबर्दस्त 'मोमेंटम' है। लेकिन, इसे बनाये रखने तथा इसमें लगातार वृद्धि की भी जरूरत है। इसमें युवाओं की महति भूमिका रहने जा रही है।

युवाओं को मानसिक रूप से तैयार करने की जरूरत

आज देश को ऐसे युवाओं की जरूरत है, जो नैराश्य भाव से दूर रहते हुए सृजन में लगे रहने में आनंद महसूस करें। इसके लिए देश में युवाओं के लिए आशा, विश्वास और प्रेरणा देने वाले माहौल की जरूरत है। युवाओं को यह याद दिलाते रहने की जरूरत है कि हमने बहुत कुछ किया है। और, उस समय किया है जब दुनिया वैज्ञानिक नज़रिये से अनजान थी और उस समय भी जब देश परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था। इसके लिए युवाओं के सामने इतिहास के उन पन्नों को खोलने की जरूरत है जिन्हें पढ़ कर वे गौरवांवित महसूस कर सकें तथा सोच सकें कि हम भारतीय हैं, हम जो ठान लेते हैं, उसे पूरा करके दिखाने का सामर्थ्य भी रखते हैं। उन्हें आज के दौर में आगे बढ़ते समय यह भी याद दिलाना जरूरी है कि गति के साथ विरोध भी बढ़ता है। दूसरे रूकावटें भी पैदा करते हैं। ऐसे में उन्हें याद दिलाने की जरूरत है कि किस तरह पहले भी इन स्वाभाविक अवरोधों को दूर करते हुए अपनी आत्म-शक्ति के बल पर हमारे देश के वैज्ञानिक आगे बढ़े हैं और वे भी बढ़ सकते हैं। उन्हें यह याद दिलाते रहने की आवश्यकता है कि स्वंतत्र भारत में हमने इस तरह के सामर्थ्य को देखा है, जब हम विज्ञान और प्रौद्योगिकी को आरंभिक 'मोमेंटम' दे रहे थे। जब हमें बाहरी मदद मिलना बंद हो गयी तब हमारे देश के वैज्ञानिकों ने स्वदेशी तकनीकें विकसित कर विश्व को चौंकाया है। जब अमरीका ने यूरेनियम की आपूर्ति बंद की तब सेठना ने वैकल्पिक विखंडन-योग्य पदार्थ खोजा था। हमारे देश ने सवंर्धित यूरेनियम के विकल्प के रूप में 'मिश्रित ऑक्साइड युल' (यह युरेनियम-235 तथा प्लूटोनियम-239 का मिश्रण) को तब विकसित किया था, जब 1974 में परमाणु परीक्षण से कुपित हो कर अमरिका ने यूरेनियम की आपूर्ति रोक दी थी और 'तारापुर नाभिकीय रिएक्टर' को बंद करने की नौबत आ गई थी। भारत ने अपने दम पर पूर्णतः स्वदेशी 'क्रायोजेनिक इंजन' तब विकसित किया था, जब 1990 की दशक में हमारे देश को अमरीका ने प्रौद्योगिकी को देने से इंकार कर दिया था। ऐसे अनेकों उदाहरण हैं। इनसे परिचित होने के बाद निश्चित ही युवाओं का आत्मविश्वास जागने लगेगा तथा उनमें जबर्दस्त उत्साह का संचार होने लगेगा।

पाठ्यक्रम को नया स्वरूप देने की जरूरत

आज हमारे हजारों वर्षों के इतिहास में हमें हीन भावनाओं से निकालने तथा गौरवांवित करने वाली बहुत सामग्रियाँ उपलब्ध हैं। बिना किसी विवाद और शंका के हम कह सकते हैं कि अंतरिक्ष विज्ञान, गणित, औषधि, शल्य चिकित्सा; सर्जरी, मेटलर्जी, स्थापत्य को मजबूती देने वाले मसाले सीमेंट निर्माण, उच्च स्तरीय कृषि कर्म आदि में हमारे पूर्वजों को महारत हांसिल थी। हमने ही विश्व को शून्य, दाशमिक प्रणाली का ज्ञान दिया। हमारे पूर्वजों ने अंतरिक्ष संबंधी जो सटीक गणनाएं की हैं, वे आज के मान्य गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त और आधुनिक 'इंटीग्रल केल्कुलस' जैसी गणितीय तकनीकों की मदद से की गई गणनाओं के अत्यंत करीब हैं। अब सोचने वाली बात यह है कि क्या कोई अन्य अधिक क्षमतावान और सशक्त गणितीय तकनीक लुप्त हो गई है? विद्यार्थियों में इस तरह की जिज्ञासा पैदा होना जरूरी है।

इस तरह प्राचीन तथा आधुनिक भारत में विज्ञान से जुड़े इन पहलुओं को एक पाठ्यक्रम के रूप में शामिल करने से देश को

विश्व का सिरमौर बनाने की दिशा में एक अहम कदम उठा सकते हैं। इस पाठ्यक्रम के माध्यम से हम युवाओं को कुछ नया करने के लिए सपना पालने के लिए अवसर उपलब्ध करा सकते हैं। इस तरह के पाठ्यक्रम से हमें नेहरू-भाभा-भटनागर प्रभाव से तैयार हुए आजादी के तत्काल बाद के 'रोडमेप' में कुछ संशोधन होगा, जिसमें विज्ञान की जड़ें यूरोप में नहीं बल्कि देश की प्राचीन सभ्यता में दिखाई देने लगेंगी।

परम्पराओं के परिचय से मिलेंगी नयी दृष्टि और दिशाएं

हमें अपनी परम्पराओं में लोक विज्ञान छिपा हुआ मिलता है। पहली नजर में कई बातें विज्ञान-सम्मत नज़र नहीं आती हैं। लेकिन, उनकी बारीकी से पड़ताल करने पर 'विज्ञान' तो मिलता ही है लेकिन उसमें से शोध के लिए कई 'नई दिशाएं' भी मिलने लगती हैं। जब युवा जानेंगे कि कैसे जगदीश चंद्र बसु ने पेड़-पौधों के बारे में हमारे प्राचीन ग्रंथों में उल्लेखित विचारों को ध्यान में रख कर अनुसंधान कर दुनिया को पेड़-पौधों में जीवित न होने संबंधी तात्कालीन धारणा को बदलने पर मजबूर किया था। उनके शोध और तरीके आज भी प्रेरित करते हैं तथा आगे भी प्रेरित करते रहेंगे। ऐसे कई 'बसुओं' की हमें आज जरूरत है जो विज्ञान की उन कक्षाओं में पैदा हो सकते हैं, जहाँ प्राचीन तथा आधुनिक भारत के विज्ञान से परिचित कराया जाये। एक समय में जो संसाधन मूल्यवान नज़र नहीं आते हैं, वे ही प्रकृति के किसी रहस्य के उजागर हो जाने के बाद बेश-कीमती बन जाते हैं। हमारे पास उपलब्ध प्राचीन ज्ञान-विज्ञान में कई बेशकीमती बातें सांकेतिक भाषा में लिखी हुई है। हमें इनमें प्रयुक्त संकेतों के निहितार्थों को समझ कर उसे आज की वैज्ञानिक भाषा में रूपांतरित कर तकनीकों के रूप में स्थापित करने की आवश्यकता है। ऐसा होने से अचानक कुछ अकल्पनीय घट सकता है। हम जानते हैं कि 'रेडियो-एक्टिविटी की खोज के बाद कैसे कुछ देश रातों-रात अमीर हो गये थे। पेट्रोलियम पदार्थों को उद्योगों का ईंधन बनने के बाद पेट्रोलियम की बूंद को 'पेट्रो-डॉलर' बनने में देर नहीं लगी थी। इसी तरह कोई एक बेकार समझा जाने वाला पौधा अपने औषधीय गुणों के उजागर हो जाने के बाद बहुत मूल्यवान हो जाता है।

कोई भी अनुभवजन्य ज्ञान लगभग समान परिस्थितियों में लिये गये प्रेक्षणों का ही नतीज़ा होता है। हो सकता है कि इनसे निकले वैज्ञानिक निष्कर्ष और तथ्य आज की बदली हुई परिस्थितियों में सटिक प्रतीत नहीं होते हों। लेकिन, इनकी सटिकता में कमी इस अनुभवजन्य ज्ञान को नकारने की अनुमति नहीं देती। बिना आधुनिक प्रौद्योगिकी के हमारे पूर्वजों के द्वारा सृजित लोकविज्ञान से लोगों द्वारा सदियों मार्गदर्शन लेते रहना कम आश्चर्य की बात नहीं है।

जब इतिहास के माध्यम से युवा जानेंगे कि शांतिस्वरूप भटनागर, मेघनाद साहा, सत्येन्द्र नाथ बोस आदि ने विज्ञान के क्षेत्र में अपना क्रांतिकारी योगदान दिया था तो वे विषयों को नये तरीके से देखना सीखेंगे। जब वे विपरीत परिस्थितियों में संघर्ष करते हुए हमारे देश के कई वैज्ञानिकों के जीवन से जुड़ी घटनाओं को पढ़ेंगे तो उन्हें प्रत्यक्ष दिखाई देने वाली अपनी कठिनाइयाँ छोटी नज़र आने लगेगी।

भारत में विज्ञान की परम्पराएं: सम्पूर्ण वैज्ञानिक नज़रिये को विकसित करने की जरूरत

हजारों साल से भारत विज्ञान के प्रति जुनून रखने वाला देश रहा है। इसीलिये यहाँ तर्क और बहस को प्राथमिकता दी जाती रही है। इसी कारण यहाँ विभिन्न विपरीत प्रतीत होती विचारधाराएं भी एक-साथ फलती-फूलती नज़र आती रही हैं। बिना प्रमाण के किसी बात को स्वीकारना या नकारना वैज्ञानिक दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता। विस्तृत वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखने वाले लोग किसी निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए प्रमाणों को ही महत्त्वपूर्ण मानते हैं।

समग्र वैज्ञानिक नजरिया व्यक्ति को खुला करता है। दूसरों विचारों के लिये जगह बनाता है। वह तर्क से उन्हें तोलता है। तर्क न मिलने पर वह तब तक उन्हें स्थान देता है जब तक कि उससे बेहतर तर्क नहीं मिल जाते। आवश्यक हो तो वह अपनी धारणा को बदलने के लिये भी तत्पर रहता है। वह इस विश्वास के साथ चलता है कि विज्ञान में एक बार जो कह दिया वह अंतिम सच नहीं होता है। विज्ञान में आज जो सच के रूप में मान्य है वह आने वाले 'कल' में बदल भी सकता है।

सही वैज्ञानिक नज़रिये से देखने वाले व्यक्ति परम्पराओं और अंधविश्वासों को चुनौती देते हुए उनका परीक्षण करते हैं। इसीलिये वे लोग लोक-परम्पराओं में से किसी छिपे हुए विज्ञान को खोजने में भी जुटते हैं। वे यह मान कर चलते हैं कि हो सकता है जो हमें अंधविश्वास के रूप में नजर आ रहा हो, उसके कुछ गहरे निहितार्थ छिपे हों। इस तरह की सोच के साथ आगे बढ़ने पर ही हमें अपने कई परम्परागत रीतिरिवाजों के पीछे 'पर्यावरणीय दृष्टि' नज़र आने लगी है। हमारी अपनी 'दादी माँ के बटुवे' अमूल्य नज़र आने लगे हैं। हमारी आयुर्वेदिक जड़ी-बूटियाँ वैज्ञानिक आधारों पर खरी उतरने लगी हैं। कई और औषधियाँ वैज्ञानिक आधार के खोजे जाने के इंतजार में हैं।

हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि कोई भी अनुभवजन्य ज्ञान लगभग समान परिस्थितियों में लिये गये प्रेक्षणों का ही नतीज़ा होता है। हो सकता है कि इनसे निकले वैज्ञानिक निष्कर्ष और तथ्य आज की बदली हुई परिस्थितियों में सटिक प्रतीत नहीं होते हों। लेकिन, इनकी सटीकता में कमी इस अनुभवजन्य ज्ञान को नकारने की अनुमति नहीं देती। बिना आधुनिक

प्रौद्योगिकी के हमारे पूर्वजों के द्वारा सृजित लोकविज्ञान से लोगों द्वारा सदियों मार्गदर्शन लेते रहना कम आश्चर्य की बात नहीं है। इसीलिए अब हमें सोचना है कि हमारी परम्पराओं, लोकव्यवहार आदि में कई ऐसे सूत्र हो सकते हैं, जो हमें नयी दिशा दे सकते हैं। ये हमें विज्ञान को आगे बढ़ाने के लिए नया आधार उपलब्ध करा सकते हैं।

युवाओं को अतिउत्साह से बचाने की जरूरत

हमारे प्राचीन ग्रंथों के अध्ययन के बाद वैज्ञानिकों ने क्षारों, लवणों, सुगंधित पदार्थों, मोर्टार, सीमेंट एवं ल्यूट, विभिन्न रंगों के काँच, वोल्टाइक बैटरी आदि बनाने की विधियाँ खोजी, और प्रयोगों के दौरान उन्हें सच पाया। वैज्ञानिकों ने हमारे ग्रंथों में से किण्वन, वैद्युत अपघटन, जहाजों को समुद्री संक्षरण से बचाने की तकनीक, अवरक्त तरंगों के अध्ययन के लिए विशिष्ट काँच के निर्माण की तकनीक आदि भी खोजी तथा उन्हें भी वैज्ञानिक आधारों पर खरा पाया। लेकिन जब भी कोई नया अनुसंधान होता है तो हममें से कुछ उत्साही लोग कहने लगते हैं कि अरे यह तो हजारों वर्ष पूर्व हमारे ऋषियों ने कह दिया था। और फिर वे इन अनुसंधानों के निष्कर्षों से मेल खाती कहानियाँ प्रस्तुत करने लगते हैं। नाभिकीय अस्त्र के निर्माण और प्रयोग के बाद कहा गया कि महाभारत युद्ध के दौरान भी एक 'भयानक अस्त्र' का प्रयोग किया गया था, जिससे वही दृश्य उपस्थित हुआ था जैसा आज एटम बम के प्रयोग से होता है। लेकिन बम बनाने के लिए प्राकृतिक यूरेनियम काम नहीं आता है। इसमें से यूरेनियम 235 के उस समस्थानिक को अलग करने की जरूरत होती है जो विखंडनीय होता है। इसे प्राप्त करने की विधि आसान नहीं है। अतः यह कहानी सुनने में तो अच्छी लग सकती है लेकिन, इसे विश्वसनीय नहीं मानी जा सकती। इस वर्णन से यह भी पता चलता है जैसे उस समय रिमोट कंट्रोल तथा जी.पी.एस. सिस्टम की तकनीक उपलब्ध थी। लेकिन, अगर हम सोचते हैं तथा कुछ पुरातत्वीय खोजों के आधार पर हमें लगता है कि ऐसा हुआ होगा और हमारे यहाँ उपलब्ध यह ज्ञान कहीं लुप्त हो गया है तो फिर इसे खोजने की जरूरत है ताकि, उसमें प्रयुक्त विवरण के अनुसार इसका निर्माण कर सकें और प्रामाणिकता के साथ अपनी बात विश्व के सामने रख सकें।

'आईंस्टीन के सापेक्षतावाद' के सिद्धांत और 'क्वांटम यांत्रिकी' की खोज के बाद यह उत्साह कुछ अधिक ही देखने में आया है। हालांकि यह गलत नहीं है। लेकिन, आईंस्टीन के निष्कर्ष विशुद्ध तर्क पर आधारित गणितीय विश्लेषण के नतीजे थे जबकि, हमारे उदाहरण और कथाएं गुणात्मक तो लगते हैं लेकिन, उनमें से गणनयोग्य कुछ खोजा नहीं जा सकता। ऐसी स्थिति में स्थापित वैज्ञानिकों को यह काल्पनिक अधिक लगता है। अगर हम इसे 'वास्तविकता' में रूपांतरित करना चाहते हैं तो हमें नये आधारों को तलाशना होगा तथा सर्वथा नये सिरे से उन निष्कर्षों तक पहुँचना होगा, जहाँ आज के अनुसंधानकर्ता पहुँचे हैं।

अतः ऐसी टिप्पणियों करने से बचना चाहिए जो अविश्वसनीय लगती हों। हम तब तक कोई बात न कहें, जब तक कि हमें अपने प्राचीन ग्रंथों के आधार पर तथा अपने दम पर कोई ठोस सिद्धांत विकसित करने का तरीका नहीं मिल जाता। इस संदर्भ में जगदीश चंद्र बसु का कार्य महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने वनस्पति में जीवन और चेतना होने संबंधी भारतीय धारणा की वैज्ञानिक आधारों पर प्रायोगिक पुष्टि की थी तथा विश्व के वैज्ञानिकों को अपनी सोच और धारणा बदलने हेतु बाध्य किया था।

वैशेषिका दर्शन में द्रव्य के विभिन्न गुणों का वर्णन आता है। इसमें मन तथा आत्मा भी शामिल हैं। आधुनिक विज्ञान इस पर विचार नहीं करता। प्रोफेसर एन.जी. डोंगरे ने अपनी पुस्तक में इसका जिक्र किया है। उन्होंने अपने ग्रंथों में उपलब्ध भौतिकी से जुड़े ज्ञान को गणितीय स्वरूप प्रदान कर आशा प्रकट की है कि इसमें छूटे हुए गुण भी विज्ञान की सीमा में आ सकेंगे लेकिन तभी, जब उन्हें भी गणितीय स्वरूप प्रदान किया जा सके।

नये पाठ्यक्रम के निर्माण की आवश्यकता

आज विज्ञान के अध्ययनकर्ताओं के लिए एक ऐसे पाठ्यक्रम के निर्माण की आवश्यकता है, जिसका उद्देश्य युवाओं में समग्र वैज्ञानिक दृष्टिकोण को विकसित करना, उन्हें अपने ज्ञान-विज्ञान की जड़ों से परिचित कराना, उनमें शोध के लिए नयी दृष्टि पैदा कराना, जगदीश चंद्र बसु की तरह अपने प्राचीन ग्रंथों में छिपे ऐसे सूत्रों को तलाशने को प्रेरित कराना जिनसे नया विज्ञान गढ़ा जा सके तथा यह विश्वास पैदा कराना कि विपरीत परिस्थितियों में भी युवा विकल्प खोजने, विश्व को चमत्कृत कर सकने तथा भारत को सिरमोर बनाने में समर्थ हैं।

kapurmaljain2@gmail.com

13 सितम्बर 1931 में जन्में शिवगोपाल मिश्र एम.एस-सी, डी.फिल, साहित्य रत्न में शिक्षित डॉ. मिश्र विज्ञान परिषद् प्रयाग इलाहाबाद के प्रधानमंत्री हैं। वे शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान के निदेशक भी रहे। उन्होंने कई विज्ञान कोश व ग्रंथों की रचना की जिसमें हिन्दी में 26 तथा अंग्रेजी में 11 पुस्तकों सहित 5 पाठ्यपुस्तकें, नौ साहित्यिक पुस्तकें, महाकवि निराला पर तीन पुस्तकें उल्लेखनीय हैं। आपको आत्माराम पुरस्कार, भारत भूषण सम्मान आदि से विभूषित किया गया है। विज्ञान को समझने-समझाने के लिए हिन्दी विज्ञान लेखन के क्रमिक विकास का विहंगावलोकन आवश्यक है। वस्तुतः ऐसी ही सोच के कारण हिन्दी विज्ञान लेखन के भूत, वर्तमान तथा भविष्य विषयक यह पुस्तक गम्भीरता से विचार करके रोचक तरीके से लिखी गई है।

भारत में विज्ञान
तब और अब

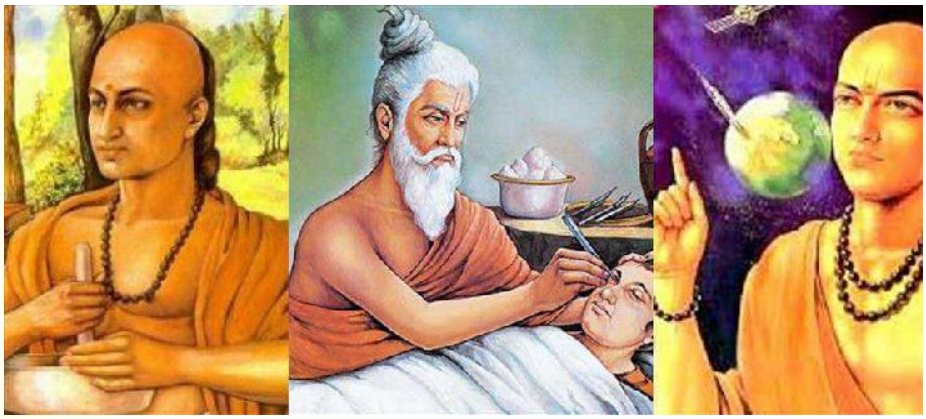

सुभाष चंद्र लखेड़ा

रक्षा शरीरक्रिया एवं संबद्ध विज्ञान संस्थान (डिपास), डीआरडीओ से वरिष्ठ वैज्ञानिक के पद से सेवानिवृत सुभाष चंद्र लखेड़ा लोकप्रिय विज्ञान लेखक और बेबाक वक्ता हैं। डिजिटल मंचों पर वे पिछले कुछ वर्षों से अपने यात्रा संस्मरणों को समय-समय पर लिखते रहे हैं। ये संस्मरण वैज्ञानिक आधार पर इतने खरे उतरते हैं कि पाठकों ने इसे एक नई विधा का स्वरूप मान लिया। सुभाष चंद्र लखेड़ा हार्डकोर विज्ञान संबंधी शोध के समानान्तर आम जन को विज्ञान की गूढ़ बातें सरल भाषा में साझा करते आये हैं। आप दिल्ली में रहते हैं।

'भारत में विज्ञानः तब और अब' पर चर्चा करने से पहले यहाँ यह उल्लेख करना उचित होगा कि 'विज्ञान वह व्यवस्थित ज्ञान है जो विचार, अवलोकन, अध्ययन और प्रयोग से मिलता है।' विज्ञान शब्द का प्रयोग ज्ञान की ऐसी शाखा के लिये भी किया जाता है, जो तथ्य, सिद्धान्त और तरीकों को प्रयोग और परिकल्पना से स्थापित और व्यवस्थित करती है। इस प्रकार किसी भी विषय के क्रमबद्ध ज्ञान को विज्ञान कहते हैं। बहुत से लोग यह मानते हैं कि पश्चिम ने विश्व को विज्ञान दिया और पूर्व ने धर्म। दूसरी ओर हमारे कुछ अपने लोग यह कहते हैं कि भारत में कोई वैज्ञानिक सोच कभी नहीं रही। दरअसल, ऐसे लोग अपने अधूरे ज्ञान का परिचय देते हैं। भारत के बगैर न धर्म की कल्पना की जा सकती है और न विज्ञान की। दरअसल, हमारे प्राचीन वैज्ञानिकों ने कुछ ऐसे आविष्कार किए और सिद्धांत गढ़े हैं कि जिनकी आधुनिक विज्ञान के फलने-फूलने में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। वास्तविकता यह है कि भारत का प्राचीन विज्ञान अरब के रास्ते यूनान पहुँचा और यूनानियों ने इस विज्ञान के दम पर जो आविष्कार किए और सिद्धांत बनाए, उससे आधुनिक विज्ञान को मदद मिली है।

हमारे समाज में यह धारणा व्याप्त है कि हम विज्ञान में हमेशा पश्चिम से पीछे रहे हैं और किसी भी विषय के वैज्ञानिक ज्ञान के लिए हम उन पर आश्रित हैं। खैर, आज इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता है कि पिछले चार सौ वर्षों से हम वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी संबंधी जानकारियाँ प्राप्त करने के लिए विदेशों और विशेष रूप से पश्चिमी देशों के ऊपर आश्रित हैं। अनेकानेक प्रयासों के बावजूद अभी तक इस स्थिति में कोई बड़ा बदलाव नहीं आया है। खैर, सदियों तक गुलामी की बेड़ियों में बंधे होने के बावजूद अगर आज भी हम दुनिया में अपना वजूद कायम रखे हुए हैं तो उसकी यही वजह है कि हमारे ज्ञान-विज्ञान की जड़ें बहुत गहरी हैं और जब हम अपनी इन जड़ों के अंतिम छोरों तक पहुँचने की कोशिश करते हैं तो बेहद विस्मयकारी जानकारी सामने आती है। इन जानकारियों से पता चलता है कि भले ही इस वक़्त हम विकासशील देशों की श्रेणी में हों लेकिन प्राचीनकाल में हम यूनान, मिश्र और रोमन सभ्यताओं से ज्ञान-विज्ञान की कुछ शाखाओं में बहुत आगे थे। इतना जरूर है कि हम उस ज़माने के अधिकांश वैज्ञानिक ज्ञान से विदेशी शासन के दौरान दूर होते चले गए। यही वजह है कि आज हमारे अधिकांश वैज्ञानिक तक प्राचीन भारतीय विद्वानों और वैज्ञानिकों के कामों को तो छोड़िए, नामों से तक अपरिचित हैं। कितने भारतीय होंगे जो बौधायन, चरक, कौमारभृत्य जीवक, सुश्रुत, आर्यभट, वराह मिहिर, ब्रह्मगुप्त, वाग्भट, नागार्जुन और भास्कराचार्य के नाम अथवा कार्यों से परिचित होंगे; इसका अंदाजा हम सभी को है।

उपलब्ध प्रमाणों से पता चलता है भारतीय सभ्यता मिश्र की सभ्यता से भी अधिक प्राचीन है तथा उसका क्षेत्र भी अधिक व्यापक है। भारत की विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की विकास-यात्रा प्रागैतिहासिक काल से आरम्भ होती है। 3000 ईसा पूर्व तथा 1500 ईसा पूर्व के बीच सिंधु घाटी में एक उन्नत सभ्यता वर्तमान थी, जिसके अवशेष मोहन जोदड़ो (मुअन-जो-दाड़ो) और हड़प्पा में मिले हैं। भारतीय आर्यों का प्राचीनतम साहित्य हमें वेदों में विशेष रूप से ऋग्वेद में मिलता है, जिसका रचनाकाल कुछ विद्वान 3000 ईसा पूर्व मानते हैं। वेदों में हमें उस काल की सभ्यता की एक झाँकी मिलती है। भारत का अतीत ज्ञान से परिपूर्ण था और भारतीय संसार का नेतृत्व करते थे। सबसे प्राचीन वैज्ञानिक एवं तकनीकी मानवीय क्रियाकलाप मेहरगढ़ में पाये गये हैं जो अब

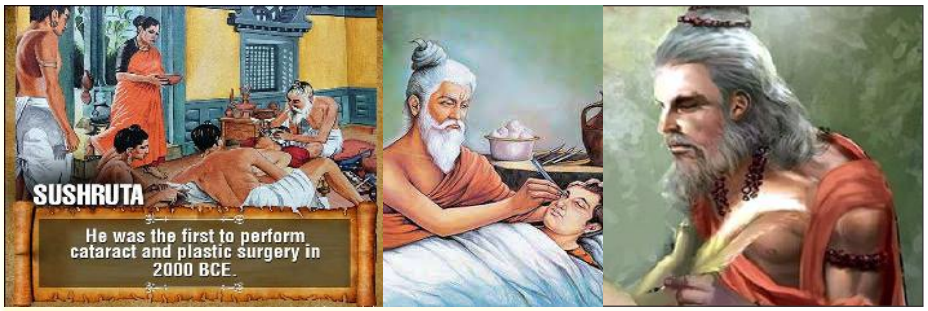

सुश्रुत कणाद

आयुर्विज्ञान के क्षेत्र में भी भारत अति प्राचीन काल से अग्रणी रहा है। सुश्रुत प्राचीन भारत के महान चिकित्साशास्त्री एवं शल्यचिकित्सक थे। उनको शल्य चिकित्सा का जनक कहा जाता है। शल्य चिकित्सा के पितामह और `सुश्रुत संहिता' के प्रणेता आचार्य सुश्रुत का जन्म छठी शताब्दी ईसा पूर्व काशी में हुआ था। इन्होंने धन्वन्तरि से शिक्षा प्राप्त की। सुश्रुत संहिता को भारतीय चिकित्सा पद्धति में विशेष स्थान प्राप्त है। सुश्रुत संहिता में शल्य चिकित्सा के विभिन्न पहलुओं को विस्तार से समझाया गया है।

पाकिस्तान में है। स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क, ऑसवीगो में सन् 1966 से लेकर सन् 1998 तक भौतिकी के प्रोफ़ेसर और बाद में इसी यूनिवर्सिटी में भौतिकी के एमेरिटस प्रोफ़ेसर रहे और अब दिवंगत डॉ. राम दास चौधरी ने नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया द्वारा प्रकाशित अपनी पुस्तक 'विज्ञान का क्रमिक विकास वैश्विक परिप्रेक्ष्य में' में संदर्भ देते हुए बताया है कि 'प्राचीन भारत से जुड़ी सिंधु घाटी की सभ्यता का प्रभाव क्षेत्र अत्यंत व्यापक था। वास्तव में इसे सिंधु-सरस्वती सभ्यता कहना अधिक उपयुक्त होगा। सिंधु-सरस्वती सभ्यता के क्षेत्र में प्रमाण मिले हैं कि सन 7000 ईसा पूर्व तक भारतीय उपमहाद्वीप के इस भू-भाग में कृषि कार्य होने लगे थे और जानवरों की प्रकृति का अध्ययन कर उन्हें पालतू बनाने के लिए चयनित कर लिया गया था। सन 5000 ईसा पूर्व से तांबे का प्रयोग होने लगा था और सन् 3000 ईसा पूर्व तक इस क्षेत्र में नागरिक सभ्यता स्थापित हो गई थी। इस दौरान वहाँ पर धातुकला, शिल्पकला, उत्कीर्णन, मूर्तिकला, मुद्रकला आदि कलाओं के कारीगर थे। दो हजार ईसा पूर्व में भारत के पश्चिमी तट से मिश्र और मेसोपोटामिया तक भारत से जहाज जाने लगे थे।' डॉ. चौधरी के अनुसार 'भारत के प्राचीन ज्ञान-विज्ञान के विकास को दो कालों में विभाजित किया जा सकता है - पहला वैदिक तथा शुल्व सूत्र काल 2000 ईसा पूर्व से सन् 400 ईस्वी तक और दूसरा खगोल तथा गणित काल, सन् 400 ईस्वी से सन् 1200 ईस्वी तक। गणित को विज्ञान की भाषा कहा जाता है। भौतिक विज्ञान के विकास में गणित का बहुत बड़ा योगदान रहा है, अतः गणित के विकास को वैज्ञानिक विकास में शामिल करना अनुचित न होगा। प्रारंभ में भारत में गणित का उपयोग यज्ञ की वेदियां, मंदिर, मठ आदि बनाने तथा ज्योतिष के लिए किया गया था।'

दरअसल, प्राचीन भारत विज्ञान के सभी क्षेत्रों में अग्रणी था। उदाहरण के लिए आचार्य बौधायन (ईसा से 800 वर्ष पूर्व) भारत के प्राचीन गणितज्ञ और शुल्व सूत्र के रचयिता था। ज्यामिति के विषय में प्रमाणिक मानते हुए सारे विश्व में यूक्लिद की ही ज्यामिति पढ़ाई जाती है। मगर यह स्मरण रखना चाहिए कि महान यूनानी ज्यामितिशास्त्री यूक्लिड से पूर्व ही भारत में कई रेखागणितज्ञ ज्यामिति के महत्वपूर्ण नियमों को खोज चुके थे। उन रेखागणितज्ञों में बौधायन का नाम सर्वोपरि है। उस समय भारत में रेखागणित या ज्यामिति को शुल्व शास्त्र कहा जाता था। पायथागोरस थ्योरम सबसे पहले महर्षि बोधायन की देन है। भौतिकी में भी प्राचीन भारतीय वैज्ञानिकों का योगदान रहा है। ऋषि कणाद को परमाणुशास्त्र का जनक माना जाता है। महर्षि कणाद ने द्वयाणुक (दो अणु वाले) तथा त्रयाणुक की चर्चा की है। उनका समयकाल छठी शताब्दी ईसा पूर्व का माना जाता है किन्तु कुछ लोग उन्हें दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व का मानते हैं। ऐसा विश्वास है कि वे गुजरात के प्रभास क्षेत्र (द्वारका के निकट) में जन्मे थे। कणाद परमाणु की अवधारणा के जनक माने जाते हैं। आधुनिक दौर में अणु विज्ञानी जॉन डाल्टन से भी हजारों साल पहले महर्षि कणाद ने यह रहस्य उजागर किया कि द्रव्य के परमाणु होते हैं। महर्षि कणाद ने परमाणु को ही अंतिम तत्व माना। महर्षि कणाद ने आज से लगभग 2600 वर्ष पूर्व ब्रह्माण्ड का विश्लेषण परमाणु विज्ञान की दृष्टि से सर्वप्रथम एक शास्त्र के रूप में सूत्रबद्ध ढंग से अपने वैशेषिक दर्शन में प्रतिपादित किया था। कुछ मामलों में महर्षि कणाद का प्रतिपादन आज के विज्ञान से भी आगे है। विख्यात इतिहासज्ञ टी. एन. कोलेब्रूक ने लिखा है कि उस समयकाल के दौरान अणुशास्त्र में आचार्य कणाद तथा अन्य भारतीय शास्त्रज्ञ यूरोपीय वैज्ञानिकों की तुलना में विश्वविख्यात थे।

आयुर्विज्ञान के क्षेत्र में भी भारत अति प्राचीन काल से अग्रणी रहा है। सुश्रुत प्राचीन भारत के महान चिकित्साशास्त्री एवं शल्यचिकित्सक थे। उनको शल्य चिकित्सा का जनक कहा जाता है। शल्य चिकित्सा के पितामह और 'सुश्रुत संहिता' के प्रणेता आचार्य सुश्रुत का जन्म छठी शताब्दी ईसा पूर्व काशी में हुआ था। इन्होंने धन्वन्तरि से शिक्षा प्राप्त की। सुश्रुत संहिता को भारतीय चिकित्सा पद्धति में विशेष स्थान प्राप्त है। सुश्रुत संहिता में शल्य चिकित्सा के विभिन्न पहलुओं को विस्तार से समझाया गया है। शल्य क्रिया के लिए सुश्रुत 125 तरह के उपकरणों का प्रयोग करते थे। ये उपकरण शल्य क्रिया की जटिलता को देखते हुए खोजे गए थे। इन उपकरणों में विशेष प्रकार के चाकू, सुइयां, चिमटियां आदि हैं। सुश्रुत ने 300 प्रकार की ऑपरेशन प्रक्रियाओं की खोज की। सुश्रुत ने कॉस्मेटिक सर्जरी में विशेष निपुणता हासिल कर ली थी। सुश्रुत नेत्र शल्य चिकित्सा भी करते थे। सुश्रुतसंहिता में मोतियाबिंद के ओपरेशन करने की विधि को विस्तार से बताया गया है। उन्हें शल्य क्रिया द्वारा प्रसव कराने का भी ज्ञान था। सुश्रुत को टूटी हुई हड्डियों का पता लगाने और उनको जोड़ने में विशेषज्ञता प्राप्त थी। शल्य क्रिया के

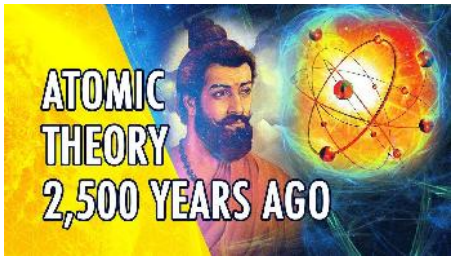

दौरान होने वाले दर्द को कम करने के लिए वे मद्यपान या विशेष औषधियां देते थे। मद्य संज्ञाहरण का कार्य करता था। इसलिए सुश्रुत को संज्ञाहरण का पितामह भी कहा जाता है। इसके अतिरिक्त सुश्रुत को मधुमेह एवं मोटापे के रोग की भी विशेष जानकारी थी। सुश्रुत श्रेष्ठ शल्य चिकित्सक होने के साथ-साथ श्रेष्ठ शिक्षक भी थे। उन्होंने अपने शिष्यों को शल्य चिकित्सा के सिद्धांत बताये और शल्य क्रिया का अभ्यास कराया। प्रारंभिक अवस्था में शल्य क्रिया के अभ्यास के लिए फलों, सब्जियों और मोम के पुतलों का उपयोग करते थे। मानव शारीर की अंदरूनी रचना को समझाने के लिए सुश्रुत शव के ऊपर शल्य क्रिया करके अपने शिष्यों को समझाते थे। सुश्रुत ने शल्य चिकित्सा में अद्‌भुत कौशल अर्जित किया तथा इसका ज्ञान अन्य लोगों को कराया। उन्होंने शल्य चिकित्सा के साथ-साथ आयुर्वेद के अन्य पक्षों जैसे शरीर सरंचना, काय चिकित्सा, बाल रोग, स्त्री रोग, मनोरोग आदि की जानकारी भी दी।

प्राचीन भारतीय चिकित्सा विज्ञान के तीन बड़े नाम हैं - चरक, सुश्रुत और वाग्भट। चरक संहिता, सुश्रुत संहिता तथा वाग्भट का अष्टांगसंग्रह आज भी भारतीय चिकित्सा विज्ञान यानी आयुर्वेद के मानक ग्रन्थ हैं। शोधकर्ताओं का अनुमान है कि आचार्य चरक का जन्म ईसा पूर्व छठी शताब्दी में हुआ होगा। चरक वैशम्पायन के शिष्य थे। आचार्य चरक ने आयुर्वेद चिकित्सा के क्षेत्र में शरीरक्रिया विज्ञान, निदान शास्त्र और भ्रूण विज्ञान पर ''चरक संहिता'' नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक को आज भी चिकित्सा जगत में बहुत सम्मान दिया जाता है। चरक ऐसे पहले चिकित्सक थे जिन्होंने पाचन, चयापचय और शरीर प्रतिरक्षा की अवधारणा दी थी। उनके अनुसार शरीर में पित्त, कफ और वायु के कारण दोष उत्पन्न हो जाते है। चरक ने यहाँ पर यह भी स्पष्ट किया है की समान मात्रा में खाया गया भोजन अलग-अलग शरीरो में भिन्न दोष पैदा करता है अर्थात एक शरीर दूसरे शरीर से भिन्न होता है। उनका कहना था कि बीमारी तब उत्पन्न होती है जब शरीर के तीनों दोष असंतुलित हो जाते है। इनके संतुलन के लिए इन्होंने कई दवाईयाँ बनायीं। आचार्य चरक को आनुवंशिकी के मूल सिद्धांतो की भी जानकारी थी। उनकी मान्यता थी कि बच्चों में आनुवंशिक दोष माता या पिता के किसी कमी के कारण नहीं बल्कि डीम्बाणु या शुक्राणु में त्रुटि के कारण होती हैं। यह मान्यता आज एक स्वीकृत तथ्य है।

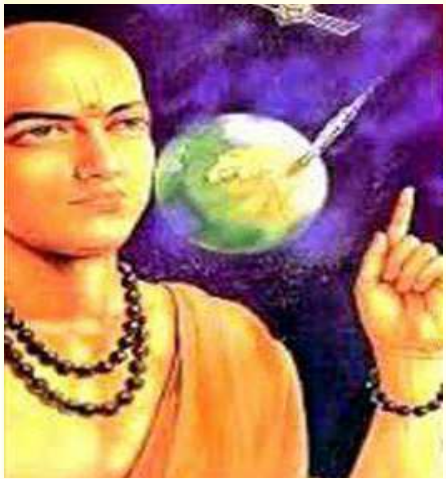

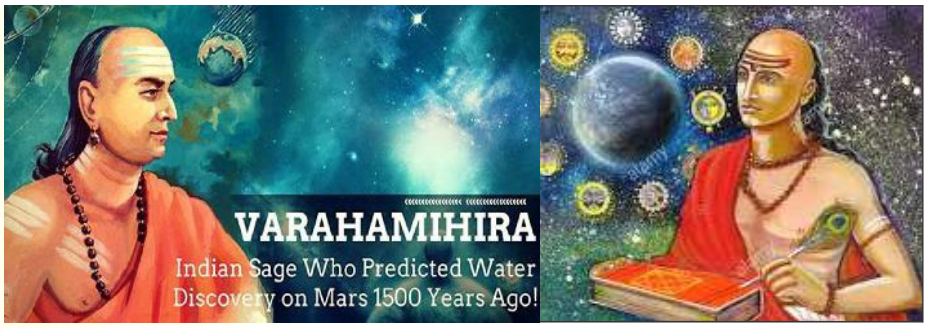

वराहमिहिर

खगोल विज्ञान के क्षेत्र में वराहमिहिर का नाम आज भी जानकार लोग आदर और श्रद्धा से लेते हैं। उनका जन्म सन् 499 ईस्वी में हुआ। यह परिवार उज्जैन के निकट कपित्थ (कायथा) नामक गाँव का निवासी था। मिहिर को उनके पिता ने ज्योतिष विद्या सिखाई। वे अपने समयकाल के एक विख्यात गणितज्ञ एवं खगोलज्ञ थे। कापित्थक (उज्जैन) में उनके द्वारा विकसित गणितीय विज्ञान का गुरुकुल सात सौ वर्षों तक अद्वितीय रहा।

सन् 476 ईस्वी में जन्मे आर्यभट प्राचीन भारत के एक महान ज्योतिषविद् और गणितज्ञ थे। उन्होंने आर्यभटीय नामक महत्वपूर्ण ज्योतिष ग्रन्थ लिखा, जिसमें वर्गमूल, घनमूल, समान्तर श्रेणी तथा विभिन्न प्रकार के समीकरणों का वर्णन है। उन्होंने अपने आर्यभट्टीय नामक ग्रन्थ में कुल 3 पृष्ठों में समा सकने वाले 33 श्लोकों में गणितविषयक सिद्धान्त तथा 5 पृष्ठों में 75 श्लोकों में खगोल-विज्ञान विषयक सिद्धान्त तथा इसके लिये यन्त्रों का भी निरूपण किया। इस ग्रंथ में इन्होंने अपना जन्मस्थान कुसुमपुर और जन्मकाल शक संवत् 398 लिखा है। बिहार में वर्तमान पटना का प्राचीन नाम कुसुमपुर था लेकिन आर्यभट का कुसुमपुर दक्षिण में था, यह अब लगभग सिद्ध हो चुका है। एक अन्य मान्यता के अनुसार उनका जन्म महाराष्ट्र के अश्मक देश में हुआ था। उनके वैज्ञानिक कार्यों का समादर राजधानी में ही हो सकता था। अतः उन्होंने लम्बी यात्रा करके आधुनिक पटना के समीप कुसुमपुर में अवस्थित होकर राजसान्निध्य में अपनी रचनाएँ पूर्ण की। आर्यभट द्वारा रचित तीन ग्रंथों की जानकारी आज भी उपलब्ध है। दशगीतिका, आर्यभटीय और तंत्र। लेकिन जानकारों के अनुसार उन्होंने और एक ग्रंथ लिखा था- 'आर्यभट सिद्धांत'। इस समय उसके केवल 34 श्लोक ही उपलब्ध हैं। उनके इस ग्रंथ का व्यापक उपयोग होता था लेकिन इतना उपयोगी ग्रंथ लुप्त कैसे हो गया, इस विषय में कोई निश्चित जानकारी नहीं मिलती। सन् 550 ईस्वी में आर्यभट की मृत्यु हो गई।

खगोल विज्ञान के क्षेत्र में वराहमिहिर का नाम आज भी जानकार लोग आदर और श्रद्धा से लेते हैं। उनका जन्म सन् 499 ईस्वी में हुआ। यह परिवार उज्जैन के निकट कपित्थ (कायथा) नामक गाँव का निवासी था। मिहिर को उनके पिता ने ज्योतिष विद्या सिखाई। वे अपने समयकाल के एक विख्यात गणितज्ञ एवं खगोलज्ञ थे। कापित्थक (उज्जैन) में उनके द्वारा विकसित गणितीय विज्ञान का गुरुकुल सात सौ

नागार्जुन

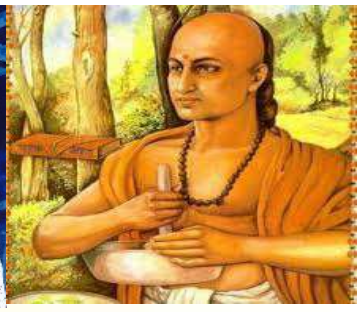

चरक

प्राचीन भारत में रसायन विज्ञान पर भी उल्लेखनीय अनुसंधान हुआ। नागार्जुन भारत के एक चर्चित धातुकर्म एवं रसायनज्ञ थे। यूं उन्हें कीमियागर भी कह सकते हैं। नागार्जुन का जन्म सन् 931 ईस्वी में गुजरात में सोमनाथ के निकट दैव्क नामक किले में हुआ था। उन्होंने रसरत्नाकर नामक रसग्रंथ की रचना की। रसरत्नाकर में रस (पारे के यौगिक) बनाने के प्रयोग दिए गये हैं। इसमें देश में धातुकर्म और कीमियागरी के स्तर का सर्वेक्षण भी दिया गया था।

वर्षों तक अद्वितीय रहा। वे बचपन से ही अत्यन्त मेधावी और तेजस्वी थे। उन्होंने अपने पिता आदित्यदास से परम्परागत गणित एवं ज्योतिष सीखकर इन क्षेत्रों में व्यापक शोध कार्य किया। समय मापक घट यन्त्र, इन्द्रप्रस्थ में लौहस्तम्भ के निर्माण और ईरान के शहंशाह नौशेरवाँ के आमन्त्रण पर जुन्दीशापुर नामक स्थान पर वेधशाला की स्थापना, उनके कार्यों की एक झलक देते हैं। वराहमिहिर का मुख्य उद्देश्य गणित एवं विज्ञान को जनहित से जोड़ना था। वराहमिहिर ने त्रिकोणमिति, अंकगणित, संख्या सिद्धान्त, क्रमचय-संचय और प्रकाशिकी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया। कुसुमपुर (पटना) जाने पर युवा मिहिर महान खगोलज्ञ और गणितज्ञ आर्यभट से मिले। इससे उन्हें इतनी प्रेरणा मिली कि उन्होंने ज्योतिष विद्या और खगोल ज्ञान को ही अपने जीवन का ध्येय बना लिया। उस समय उज्जैन विद्या का केंद्र था। गुप्त शासन के अन्तर्गत वहाँ पर कला, विज्ञान और संस्कृति के अनेक केंद्र पनप रहे थे। वराहमिहिर इस शहर में रहने के लिये आ गये क्योंकि अन्य स्थानों के विद्वान भी यहाँ एकत्र होते रहते थे। समय आने पर उनके ज्योतिष ज्ञान का पता विक्रमादित्य चन्द्रगुप्त द्वितीय को लगा। राजा ने उन्हें अपने दरबार के नवरत्नों में शामिल कर लिया। मिहिर ने सुदूर देशों की यात्रा की, यहाँ तक कि वह यूनान तक भी गये। सन् 587 में वराहमिहिर की मृत्यु हो गई।

आचार्य ब्रह्मगुप्त का जन्म सन् 598 ईस्वी में हुआ। प्रसिद्ध भारतीय गणितज्ञ थे। वे तत्कालीन गुर्जर प्रदेश के अन्तर्गत आने वाले वर्तमान मध्य प्रदेश के शहर उज्जैन की अन्तरिक्ष प्रयोगशाला के प्रमुख थे। प्रसिद्ध गणितज्ञ एवं ज्योतिषी भास्कराचार्य द्वितीय ने इनकी विद्वत्ता की प्रशंसा की है। फारस के एक प्रसिद्ध मध्यकालीन विद्वान अलबरूनी ने भी ब्रह्मगुप्त का उल्लेख किया है। ब्रह्मगुप्त के पिता का नाम जिष्णु था। इन्होंने प्राचीन ब्रह्मपितामह सिद्धांत के आधार पर ब्रह्मस्फुटसिद्धांत तथा खण्डखाद्यक नामक ग्रंथ लिखे, जिनका अनुवाद अरबी भाषा में, अनुमानतः खलीफा मंसूर के समय, सिंदहिंद और अल अकरंद के नाम से हुआ। इनका एक अन्य ग्रंथ 'ध्यानग्रहोपदेश' नाम का भी है। इन ग्रंथों के कुछ परिणामों का विश्वगणित में अपूर्व स्थान है। इनका जन्म राजस्थान राज्य के भीनमाल शहर में हुआ था। इसी कारण उन्हें 'भिल्लमालाआचार्य' के नाम से भी कई जगह उल्लेखित किया गया है। 'ब्रह्मस्फुटसिद्धांत' उनका सबसे पहला ग्रन्थ माना जाता है जिसमें शून्य का एक अलग अंक के रूप में उल्लेख किया गया है। यही नहीं, बल्कि इस ग्रन्थ में ऋणात्मक अंकों और शून्य पर गणित करने के सभी नियमों का वर्णन भी किया गया है। ''ब्रह्मस्फुटसिद्धांत'' के साढ़े चार अध्याय मूलभूत गणित को समर्पित हैं। 12वां अध्याय, गणित, अंकगणितीय शृंखलाओं तथा ज्यामिति के बारे में है। गणित के सिद्धान्तों का ज्योतिष में प्रयोग करने वाला वे प्रथम विद्वान थे। उनके ब्रह्मस्फुटसिद्धांत के द्वारा ही अरबों को भारतीय ज्योतिष का पता लगा। अब्बासिद ख़लीफ़ा अल-मंसूर (सन् 712- 775 ईस्वी) ने बग़दाद की स्थापना की और इसे शिक्षा के केन्द्र के रूप में विकसित किया। उन्होंने उज्जैन के कंकः को आमंत्रित किया जिसने ब्रह्मस्फुट-सिद्धांत के सहारे भारतीय ज्योतिष की व्याख्या की। अब्बासिद के आदेश पर अल-फ़ज़री ने इसका अरबी भाषा में अनुवाद किया। ब्रह्मगुप्त ने किसी वृत्त के क्षेत्रफल को उसके समान क्षेत्रफल वाले वर्ग से स्थानान्तरित करने का भी यत्न किया। ब्रह्मगुप्त ने पृथ्वी की परिधि ज्ञात की थी, जो आधुनिक मान के निकट है। आचार्य ब्रह्मगुप्त ने पाई (pi) (3.14159265) का मान 10 के वर्गमूल (3.16227766) के बराबर माना। ब्रह्मगुप्त का सबसे महत्वपूर्ण योगदान चक्रीय चतुर्भुज पर है। उन्होने बताया कि चक्रीय चतुर्भुज के विकर्ण परस्पर लम्बवत होते हैं। ब्रह्मगुप्त ने चक्रीय चतुर्भुज के क्षेत्रफल निकालने का सन्निकट सूत्र तथा यथातथ सूत्र भी दिया है।

प्राचीन भारत में रसायन विज्ञान पर भी उल्लेखनीय अनुसंधान हुआ। नागार्जुन भारत के एक चर्चित धातुकर्मी एवं रसायनज्ञ थे। यूं उन्हें कीमियागर भी कह सकते हैं। नागार्जुन का जन्म सन् 931 ईस्वी में गुजरात में सोमनाथ के निकट दैहक नामक किले में हुआ था। उन्होंने रसरत्नाकर नामक रसग्रंथ की रचना की। रसरत्नाकर में रस (पारे के यौगिक) बनाने के प्रयोग दिए गये हैं। इसमें देश में धातुकर्म और कीमियागरी के स्तर का सर्वेक्षण भी दिया गया था। इस पुस्तक में चांदी, सोना, टिन और तांबे की कच्ची धातु निकालने और उसे शुद्ध करने के तरीके भी बताये गए हैं। पारे से संजीवनी और अन्य पदार्थ बनाने के लिए नागार्जुन ने पशुओं और वनस्पति तत्वों और अम्ल और खनिजों का भी इस्तेमाल किया। हीरे, धातु और मोती घोलने के लिए उन्होंने वनस्पति से बने तेजाबों का सुझाव दिया। उसमें खट्टा दलिया, पौधे और फलों के रस थे। उन्होंने और पहले के कीमियागरों ने जिन उपकरणों का इस्तेमाल किया था उसकी सूची भी पुस्तक में दी गई है। आसवन (डिस्टीलेशन), द्रवण (लिक्वीफेक्शन), उर्ध्वपातन (सबलीमेशन) और भूनने के बारे में भी पुस्तक मे वर्णन है। पुस्तक में विस्तारपूर्ण दिया गया है कि अन्य धातुएं सोने में कैसे बदल सकती हैं। यदि सोना न भी बने रसागम

विशमन द्वारा ऐसी धातुएँ बनाई जा सकती हैं जिनकी पीली चमक सोने जैसी ही होती थी। हिंगुल और टिन जैसे केलमाइन से पारे जैसी वस्तु बनाने का तरीका दिया गया है। नागार्जुन ने सुश्रुत संहिता के पूरक के रूप में 'उत्तर तन्त्र' नामक पुस्तक भी लिखी। इसमें दवाइयाँ बनाने के तरीके दिये गये हैं। उन्होंने आयुर्वेद की एक पुस्तक 'आरोग्यमञ्जरी' भी लिखी। उनकी अन्य पुस्तकें है- कक्षपूत तन्त्र, योगसर और योगाष्टक।

महावीराचार्य नौवीं शताब्दी के भारत के प्रसिद्ध ज्योतिषविद् और गणितज्ञ थे। वे गुलबर्ग के निवासी थे। वे जैन धर्म के अनुयायी थे। उन्होंने क्रमचय-संचय (कम्बिनेटोरिक्स) पर बहुत उल्लेखनीय कार्य किये तथा विश्व में सबसे पहले क्रमचयों एवं संचयों (कंबिनेशन्स) की संख्या निकालने का सामान्यीकृत सूत्र प्रस्तुत किया। उन्होंने गणित सार संग्रह नामक गणित ग्रन्थ की रचना की जिसमें बीजगणित एवं ज्यामिति के बहुत से विषयों की चर्चा है। उनके इस ग्रंथ का पवुलुरि मल्लन् ने तेलुगू में 'सारसंग्रह गणितम्' नाम से अनुवाद किया। आचार्य महावीर ने गणित के महत्व को रेखांकित करते हुए लिखा है कि इस चराचर जगत में जो कोई भी वस्तु है, वह गणित के बिना नहीं है एवं उसको गणित के बिना नहीं समझा जा सकता है। उन्होंने क्रमचय एवं संचय की संख्या का सामान्य सूत्र प्रस्तुत किये; एन -डिग्री वाले समीकरणों का हल प्रस्तुत किये और चक्रीय चतुर्भुज के कई गुणों को प्रकाशित किया। उन्होने बताया था कि ऋणात्मक संख्याओं का वर्गमूल नहीं हो सकता है ।

भास्कराचार्य द्वितीय (सन् 1114 ईस्वी-1185 ईस्वी) प्राचीन भारत के एक प्रसिद्ध गणितज्ञ एवं ज्योतिषी थे। इनका जन्म सन् 1114 ईस्वी में हुआ था। इनके द्वारा रचित मुख्य ग्रन्थ सिद्धान्त शिरोमणि है जिसमें लीलावती, बीजगणित, ग्रहगणित तथा गोलाध्याय नामक चार भाग हैं। ये चार भाग क्रमशः अंकगणित, बीजगणित, ग्रहों की गति से सम्बन्धित गणित तथा गोले से सम्बन्धित हैं। आधुनिक युग में धरती की गुरुत्वाकर्षण शक्ति की खोज का श्रेय न्यूटन को दिया जाता है। भास्कराचार्य ने अपने 'सिद्धांतशिरोमणि' ग्रंथ में पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के बारे में लिखा है कि 'पृथ्वी आकाशीय पदार्थों को विशिष्ट शक्ति से अपनी ओर खींचती है। इस कारण आकाशीय पिण्ड पृथ्वी पर गिरते हैं।' उन्होंने करण कौतूहल नामक एक दूसरे ग्रन्थ की भी रचना की थी। ये अपने समय के सुप्रसिद्ध गणितज्ञ थे। कथित रूप से यह उज्जैन की वेधशाला के अध्यक्ष भी थे। उन्हें मध्यकालीन भारत का सर्वश्रेष्ठ गणितज्ञ माना जाता है। वे प्रथम गणितज्ञ थे जिन्होनें कहा था कि कोई संख्या जब शून्य से विभक्त की जाती है तो अनंत हो जाती है और किसी संख्या और अनंत का जोड़ भी अंनत होता है। खगोलविद् के रूप में भास्कर अपनी तात्कालिक गति की अवधारणा के लिए प्रसिद्ध हैं। इससे खगोल वैज्ञानिकों को ग्रहों की गति का सही-सही पता लगाने में मदद मिलती है। बीजगणित में भास्कर ब्रह्मगुप्त को अपना गुरु मानते थे

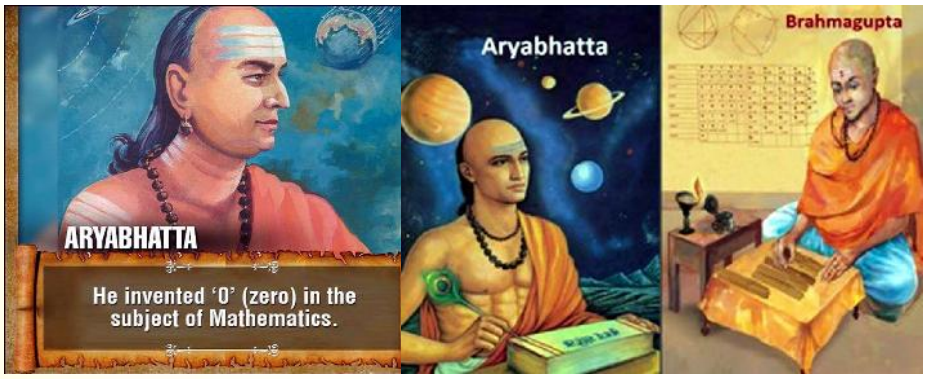

आर्यभट ब्रह्मगुप्त

प्राचीन काल में अन्य कई देशों की तुलना में भारत में विज्ञान एक बेहतर स्थिति में था। इस लेख में कुछ प्राचीन चुनिंदा विद्वानों की वैज्ञानिक उपलब्धियों पर संक्षिप्त चर्चा की गई है। इनके अलावा भी प्राचीन काल में भारत में अनेक ऐसे विद्वान हुए जिन्होंने मानव के चहुँमुखी विकास के लिए बेहद महत्त्वपूर्ण शोध कार्य किये। हमारे पूर्वजों ने अपने अध्ययन और अनुभव के आधार पर गणित, भौतिकी, रसायन विज्ञान, खगोलिकी और आयुर्विज्ञान संबंधी जो ग्रंथ लिखे हैं, उनमें से आज कुछ ही उपलब्ध हैं। अधिकांश ग्रंथों को या तो विदेशी लोग अपने साथ ले गए अथवा उनको विदेशी हमलावरों ने नष्ट कर दिया।

कुल मिलाकर, प्राचीन काल में अन्य कई देशों की तुलना में भारत में विज्ञान एक बेहतर स्थिति में था। इस लेख में कुछ प्राचीन चुनिंदा विद्वानों की वैज्ञानिक उपलब्धियों पर संक्षिप्त चर्चा की गई है। इनके अलावा भी प्राचीन काल में भारत में अनेक ऐसे विद्वान हुए जिन्होंने मानव के चहुँमुखी विकास के लिए बेहद महत्त्वपूर्ण शोध कार्य किये। हमारे पूर्वजों ने अपने अध्ययन और अनुभव के आधार पर गणित, भौतिकी, रसायन विज्ञान, खगोलिकी और आयुर्विज्ञान संबंधी जो ग्रंथ लिखे हैं, उनमें से आज कुछ ही उपलब्ध हैं। अधिकांश ग्रंथों को या तो विदेशी लोग अपने साथ ले गए अथवा उनको विदेशी हमलावरों ने नष्ट कर दिया। कुछ समय के साथ नष्ट होते चले गए। हमारे युवाओं को इस तथ्य से जरूर परिचित होना चाहिए ताकि वे इस आत्मविश्वास से लबालब हो सकें कि अतीत में हम विज्ञान सहित सभी कलाओं में अग्रणी रहे। लेकिन अपने अतीत पर गौरव करने का अर्थ यह कदापि नहीं है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हम शेष दुनिया के योगदान को नकारते रहें। हमें तो सिर्फ यह विचार करना चाहिए कि आज हम इस दौड़ में स्वस्थ स्पर्द्धा से अपना वह स्वर्णिम स्थान कैसे हासिल कर सकते हैं? हम सभी को जवाब भी मालूम है- अपनी कमजोरियों को पहचान कर और फिर उन खामियों को दूर कर हम अपनी वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं के लिए तय विज़न और मिशन (परिकल्पना और लक्ष्य) हासिल कर सकते हैं। विज्ञान के नोबेल पुरस्कारों को नकारने और उन पर बेमतलब की टीका टिप्पणी करने से कोई लाभ नहीं होने वाला है। हमारा लक्ष्य तो आने वाले वर्षों में अधिक से अधिक नोबेल पुरस्कार प्राप्त करना होना चाहिए।

subhash.surendra@gmail.com

खानपान के रंग बिरंगे रसायन

डॉ.कृष्ण कुमार मिश्र

डॉ.कृष्ण कुमार मिश्र ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से रसायन विज्ञान में पीएच-डी. की उपाधि प्राप्त की। आप टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान मुंबई के होमी भाभा विज्ञान केन्द्र में एसोसिएट प्रोफेसर हैं। लोकप्रिय विज्ञान लेखक के रूप में आपकी अपार ख्याति है जोकि हिन्दी में आपके व्यापक लेखन से निर्मित हुई है। आपके 250 से अधिक लेख तथा 22 पुस्तकें प्रकाशित हैं। राजभाषा गौरव पुरस्कार, होमी जहाँगीर भाभा स्वर्ण पुरस्कार, शताब्दी सम्मान, राजभाषा भूषण पुरस्कार, इस्वा सम्मान सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित डॉ.मिश्र मुंबई में निवास करते हैं।

खानपान की चीजों में रसायन पहले से ही मिलाए जाते रहे हैं। मिठाइयों तथा बेकरी के उत्पादों में अनेक रसायनों के मिलाने की अनुमति है। ये रसायन स्वास्थ्य के लिए प्रायः निरापद होते हैं। पूरी दुनिया में ये रासायनिक यौगिक आहार में मिलाए जाते हैं। इन्हें आहार योज्य (फूड ऐडिटिव्स) कहा जाता है। ये कई तरह के होते हैं तथा गुणधर्म के आधार पर इन्हें कई श्रेणियों में बाँटा जाता है। प्रस्तुत लेख में हम कुछ प्रमुख रंग-बिरंगे रसायनों का जिक्र करेंगे जो अमूमन मिठाईयों तथा बेकरी उत्पादों में मिलाए जाते हैं।

आज से कुछ साल पहले जब दिल्ली स्थित 'सेन्टर फॉर साइंस एण्ड एनवायरनमेंट (CSE) ने ब्रेड में खतरनाक रसायनों की मिलावट किए जाने की रिपोर्ट दी तो उसकी बड़ी चर्चा हुई थी। दरअसल संस्था द्वारा अपनी लैब में जाँचे गये ब्रांडों में से अधिकतर में पोटैशियम ब्रोमेट तथा पोटैशियम आयोडेट की मात्रा पायी गयी थी। गौरतलब है कि ये रसायन दुनिया के अनेक देशों में खानपान में प्रतिबंधित हैं क्योंकि ये बेहद नुकसानदायक हैं तथा कैंसरकारी हैं। यह खबर समाचार माध्यमों में प्रमुखता से छपी थी। इसके बाद से लोगों में खानपान की चीजों में रसायनों की मिलावट के बारे में जागरूकता बढ़ी है। वास्तव में खानपान की चीजों में तमाम तरह के यौगिक मिलाए जाते हैं जिनके बारे में प्रायः बहुत कम लोगों को जानकारी होती है। इस लेख का उद्देश्य लोगों को खाद्य पदार्थों में आम तौर पर मिलाये जाने वाले अनुमन्य यौगिकों की जानकारी देना है।

कुछ प्रमुख प्राकृतिक खाद्य रंगकारक

हल्दी : हल्दी भी एक प्राकृतिक खाद्य योज्य पदार्थ है। इसका उपयोग दाल, सब्जी तथा अन्य भोज्य पदार्थों में मसाले के रूप में प्रमुखता से किया जाता हैं। हल्दी का वानस्पतिक नाम कुरकुमा लोंगा (Curcuma longa) है। हल्दी अदरक प्रजाति का 2-3 फीट का पौधा होता है, जिसकी जड़ों को काट कर सुखाया जाता है तथा फिर इसे पाउडर की तरह पीस कर उपयोग में लाया जाता है। इसका उपयोग खाद्य पदार्थों में पीला रंग प्राप्त करने के लिए किया जाता हैं। हल्दी प्राकृतिक रंगकारक के साथ ही साथ एक गुणकारी औषधि भी है। पाचन तन्त्र की समस्याओं, गठिया, रक्त-प्रवाह की समस्याओं, कैंसर, जीवाणुओं (बैक्टीरिया) के संक्रमण, उच्च रक्तचाप और एलडीएल कोलेस्टेरॉल की समस्या और शरीर की कोशिकाओं की टूट-फूट की मरम्मत आदि में हल्दी अत्यधिक लाभकारी है।

केसर : केसर का उपयोग भी रंगकारक के रूप में होता है। इसे स्वास्थ के लिए अच्छा तथा गुणकारी माना जाता है। भारत में केसर की खेती सिर्फ जम्मू-कश्मीर में होती है। इसके लिए शीत जलवायु उपयुक्त मानी जाती है। केसर बहुत महँगा होता है। इसलिए बाजार में प्रायः शुद्ध केसर मिलना थोड़ा कठिन होता है। इसका उपयोग मक्खन आदि खाद्य द्रव्यों में रंग तथा जायका लाने के लिए किया जाता हैं। यह कफ नाशक, मन को प्रसन्न करने वाली, मस्तिष्क को बल देने वाली, हृदय और रक्त के लिए हितकारी, तथा खाद्य पदार्थ और पेय (जैसे दूध) को रंगीन और सुगन्धित करने वाली होती है।

बीटानिन : बीटानिन को भी खाद्य-योज्य रंजक के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह चुकन्दर के फल से प्राप्त किया जाता है। इसका आणविक सूत्र $C_{24}H_{26}N_2O_3$ है। बीटानिन का उपयोग आइसक्रीम, कलाकन्द तथा अन्य कन्फैक्शनरी उत्पादों में हल्का लाल, बैंगनी तथा जामुनी रंग प्राप्त करने के लिए प्रमुखता से किया जाता है। यह स्वास्थ के अत्यन्त लाभकारी है, इसके उपयोग से होमोग्लोबिन की मात्रा में वृद्धि होती हैं। यह कैंसर, शुगर, यकृत तथा हृदय से सम्बन्धित बीमारियों के खतरे को कम करता है। अमेरिका के विस्कोसिन-मैडिसन विश्वविद्यालय के अनुसंधानकर्ताओं ने अपने शोध में यह पाया है कि चुकंदर में विद्यमान लाल रंग का तत्व शरीर में विशेष तरह के प्रोटीनों का स्तर बढ़ाता है, जिन्हें फेज-2 एंजाइम कहते हैं। ये एंजाइम्स कैंसर पैदा करने वाले टॉक्सिन्स को निष्क्रिय करके नष्ट कर देते हैं।

कैरामेल : कैरामेल गहरे भूरे रंग का पदार्थ होता है। इसे कार्बोहाइड्रेट से नियंत्रित ताप अभिक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता हैं। उदारहरणार्थ, सुक्रोज को 170 अंश सेंटीग्रेड तापमान पर धीरे-धीरे गरम करते रहने पर कैरामेल बनता है। कैरामेल का उपयोग विभिन्न खाद्य पदार्थों में रंगकारक के रूप में किया जाता हैं। कस्टर्ड, चॉकलेट, कुकीज, ब्रांडी, रम, अचार तथा सॉस आदि औद्योगिक खाद्य तथा पेय उत्पादों में, इसका उपयोग प्रमुख रंगकारक के रूप में होता है।

क्लोरोफिल : क्लोरोफिल जटिल संरचना का अणु होता है जो हरे पौधों, शैवाल तथा प्रकाशसंश्लेषी जीवाणुओं में पाया जाता हैं। क्लोरोफिल-ए का आणविक सूत्र $C_{55}H_{72}O_5N_4Mg$, तथा क्लोरोफिल-बी का आणविक सूत्र $C_{55}H_{70}MgN_4O_6$ है। क्लोरोफिल के कारण ही पौंधों की पत्तियों का रंग हरा होता है। इसका उपयोग भोज्य पदार्थों (जैसे- पेय, आइसक्रीम, पॉप्सिकल्स, कैंडीज, सॉस, पास्ता तथा अचार आदि) में प्राकृतिक रंगकारक के रूप में हरा रंग प्राप्त करने के लिए किया जाता हैं। कुछ वैज्ञानिकों का मानना है कि खाद्य पदार्थों में क्लोरोफिल का उपयोग सीमित मात्रा में करना चाहिए। अधिक मात्रा में प्रयोग करने पर यह स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकता है।

कुछ प्रमुख कृत्रिम खाद्य रंगकारक

हमारे देश में खानपान से जुड़े विषयों पर विचार करने के लिए भारतीय खाद्य संरक्षा एवं मानक प्राधिकरण (Food Safety and Standards Authority of India, FSSAI) का गठन किया गया है। इस संस्था का उद्देश्य खाद्य सामग्री के लिये विज्ञान विधियों पर आधारित मानकों का निर्माण करना तथा खाद्य पदार्थों के विनिर्माण, भण्डारण, वितरण, विक्री तथा आयात आदि को नियन्त्रित करना है ताकि मानव-उपभोग के लिये सुरक्षित तथा सम्पूर्ण आहार की उपलब्धि सुनिश्चित की जा सके। अमेरिका में यही काम 'फूड एण्ड ड्रग ऐडमिनिस्ट्रेशन' (एफडीए) द्वारा किया जाता है। दुनिया के सभी देश प्रायः एफडीए के मानकों का अनुसरण करते हैं। इन मानकों द्वारा प्रमाणित रंगकारक सुरक्षित होते हैं। खानपान बेहद गंभीर विषय है, अतः खाद्यपदार्थों में प्रमाणित रसायनों का ही प्रयोग होना चाहिए। अप्रमाणित रंग स्वास्थ्य को हानि पहुँचा सकते हैं। एफडीए ने ऐसे कुछ कृत्रिम रंगों को प्रमाणित किया है तथा उनके उपयोग की अनुमति दी है जो इस प्रकार हैं।

ब्लू नं. 1: इसे व्यावसायिक तौर पर ब्रिलिएंट ब्लू एफसीएफ (Brilliant Blue FCF) के नाम से भी जाना जाता है। इसे खाद्य पदार्थों में व्यापक तौर पर इस्तेमाल किया जाता है। यह लाल-नीले रंग का पाउडर होता है जो खाद्य पदार्थों को लाल (लालिमा)- नीला (नीलिमा) जैसे रंग देने के लिए उपयोग किया जाता है। रासायनिक तौर पर यह मुख्यतः डाइसोडियम लवण होता है। इसका रासायनिक सूत्र $C_{37}H_{34}N_2Na_2O_9S_3$ होता है। यह पानी में सरलता से घुलनशील है। ब्रिलिएंट ब्लू एफसीएफ का उपयोग अकसर आइसक्रीम, डिब्बाबंद मटर, पैकेट सूप, पेय-पदार्थों, आइस क्यूब्स, नीले रसभरी के जायके वाले उत्पादों, दुग्धोत्पादों, मिठाइयों में किया जाता है। ब्लू क्यूराकाओ (blue curacao) नामक मदिरा में विशेष रूप से इसका प्रयोगा किया जाता है।

ग्रीन नं.3: इसे फास्ट ग्रीन एफसीएफ (Fast Green FCF) के नाम से जाना जाता है। फास्ट ग्रीन एफसीएफ के साथ एक कठिनाई यह है कि यह आंतों के द्वारा अवशोषित नहीं हो पाता है। इसलिए इसे यूरोपीय संघ तथा कुछ अन्य देशों द्वारा खाद्य रंजक के रूप में प्रतिबंधित कर किया गया है। इसका प्रयोग डिब्बाबंद मटर तथा अन्य सब्जियों, जेली, सॉस, मछली, मिठाई, सूखी बेकरी उत्पादों में किया जाता है। मात्रात्मक तौर पर अधिकतम 100 मिग्रा. प्रति किग्रा. के स्तर तक ही किया जा सकता है। खाद्य रंजकों में यह सबसे कम इस्तेमाल किया जाने वाला रंजक है।

रेड नं.40: रेड नं. 40 लाल रंग का ऐज़ो रंजक है जिसकी संरचना में ऐज़ो समूह (-N=N-) पाया जाता है। रेड नं। 40 को एल्यूरा रेड (Allura Red), या फूड रेड 17 (Food Red 17), भी कहा जाता है। रासायनिक तौर पर यह यौगिक 2-नैफ्थलीन सल्फोनिक एसिड (2-naphthalene sulfonic acid) होता है। इसे खाद्य पदार्थों में रंजक के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह लाल रंग का एक पाउडर होता है। यह आम तौर पर सोडियम लवण के रूप में मिलता है। लेकिन इसे कैल्शियम या पोटैशियम लवण के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है। यह पानी में सरलता से धुल जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में फूड एण्ड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन (FDA) ने कुछ सौंदर्य प्रसाधनों, दवाइयों और खाद्य पदार्थों में एल्यूरा रेड के उपयोग की स्वीकृति प्रदान की है। टैटू बनाने की स्याही तथा शीतल पेय पदार्थों, बच्चों की दवाइयों, कॉटन कैंडी बनाने में इसका प्रयोग किया जाता है।

यैलो नं.5: यह मुख्य रूप से खाद्य पदार्थों में उपयोग किया जाने

वाला हलके पीले रंग का रसायन है। इसे टार्ट्राज़ीन, (Tartrazine), ऐसिड यैलो 23 (Acid Yellow 23), फूड यैलो 4, (Food Yellow 4), तथा ट्राईसोडियम 1-(4-सल्फोनेटोफिनाइल)-4-(4-सल्फोनेटोफिनाइल-ऐज़ो)-5-पाइराज़ोलोन-3-कार्बाक्सिलेट) के नाम से भी जाना जाता है। यह दुनिया भर में खास तौर से पीले रंग के लिए इस्तेमाल किया जाता है। लेकिन विभिन्न प्रकार के हरे रंग पैदा करने के लिए इसे ब्रिलिएन्ट ब्लू एफसीएफ (Brilliant Blue FCF) या ग्रीन एस (Green S) के साथ मिलाकर भी उपयोग किया जाता है। जैसा कि जिक्र किया गया है, इस यौगिक का उपयोग खाद्य पदार्थों को हल्का पीला या हरा रंग देने के लिए किया जाता है। डेजर्ट और

मिठाई जैसे आइसक्रीम, आईस कैंडी, कॉटन कैंडी, मुरब्बा, केक, पेस्ट्री, कस्टर्ड पाउडर, बादाम का मीठा हलवा, बिस्कुट और कुकीज़ में इसका प्रयोग किया जाता है। पेय पदार्थों जैसे शीतल पेय, शक्तिवर्धक पेयपदार्थ, पाउडर्ड पेय पदार्थ मिक्स, फल और मादक पेयपदार्थों में भी यैलो नं.5 का इस्तेमाल होता है। मक्का चिप्स, च्युइंग गम, पॉपकॉर्न और पोटैटो चिप्स, जैसे स्नैक्स में भी यह प्रयोग में लाया जाता है। जैम, जेली, मुरब्बा, सरसों, सहजन, अचार और संसाधित सॉस के साथ-साथ अन्य प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों जैसे सूप, और नूडल्स में भी इसका व्यापक प्रयोग होता है।

यैलो नं. 6: इसे सनसेट यैलो एफसीएफ (Sunset Yellow FCF) या आरेन्ज यैलो एस (Orange Yellow S) के नाम से भी जाना जाता है। यह एक नारंगी रंग का ऐज़ो रंजक है जिसका उपयोग खाद्य पदार्थों में किया जाता है। सनसेट यैलो एफसीएफ का उपयोग किण्वित खाद्य पदार्थों (Fermented Foods) में किया जाता है। यह नारंगी रंग के सोडा, बादाम हलुवा, स्विस रोल, नींबू का मुरब्बा, मिठाई, पेय मिक्स, कस्टर्ड पावडर, शक्तिवर्धक पेयपदार्थ, चिप्स, नूडल्स, चीज़, आइसक्रीम, दवाइयों, केक की सजावट के लिए उपयोग किए जाने वाले आइसिंग तथा अन्य कृत्रिम पीले, नारंगी तथा लाल रंग के खाद्य पदार्थों में उपयोग किया जाता है।

उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि हमारे खानपान में अनेक तरह के रसायन मिलाए जाते हैं। ये यदि अनुमन्य हैं तो सेहत के लिए कोई दिक्कत नहीं है। लेकिन अकसर देखा जाता है कि व्यावसायिक लाभ के लिए सस्ते तथा निम्न गुणवत्ता के रसायनों का इस्तेमाल होने लगता है जिससे लोगों के स्वास्थ्य तथा जीवन के लिए खतरा पैदा हो जाता है। इस बारे में भोज्य पदार्थों की गुणवत्ता तय करने वाली नियामक संस्थाओं की भूमिका कहीं बढ़ जाती है। उन्हें नियमित तौर पर नमूने लेकर जाँच कराते रहना चाहिए तथा मिलावट मिलने पर कठोर कानूनी कार्रवाई करनी चाहिए। साथ ही यह भी बहुत जरूरी है कि आम जनमानस में भी अपने खानपान के बारे में व्यापक तौर पर जागरूकता पैदा हो।

vigyan.lekhak@gmail.com

पानी को बचाना

सबसे बड़ी आवश्यकता

डॉ.मनीष मोहन गोरे

मनीष मोहन गोरे विज्ञान प्रसार दिल्ली में वैज्ञानिक के पद पर कार्यरत हैं। वे विज्ञान लेखन के क्षेत्र में विज्ञान कथा और लेख दोनों ही लिखते रहे हैं किन्तु इधर के दो-तीन वर्षों में उन्होंने देशभर के वरिष्ठ विज्ञान लेखकों की साक्षात्कार-शृंखला तैयार की है। विज्ञान लेखन, विज्ञान संचार और विज्ञान जिज्ञासाओं को ध्यान में रखकर उन्होंने जिन वैज्ञानिकों से बातचीत की वह काफी चर्चा में रहे। हमें खुशी है कि 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिये' में हम उन वार्ताओं को नियमित प्रकाशित कर सके हैं।

भारतीय संस्कृति में पानी को बेहद महत्व प्रदान किया गया है। गंगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा, सिंधु ये सब भारत की नदियाँ तभी तक पवित्र और जीवनदायिनी हैं, जब तक इनमें पानी मौजूद है। पानी न केवल एक बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधन है, बल्कि यह हम मनुष्यों, पशु-पक्षियों और पेड़-पौधों के जीवन का आधार भी है। धरती पर पहले जीव की उत्पत्ति करोड़ों साल पहले पानी में ही हुई थी। मानव सभ्यता और कृषि का विकास नदियों और जल स्रोतों के पास ही हुआ है। सिन्धु घाटी सभ्यता का विकास सिन्धु नदी, मिस्र की सभ्यता नील नदी, चीन की सभ्यता येलो और यांगजे नदियों के पास हुआ है।

जलः हमारी सभ्यता का प्रतीक

जल को जीवन से जोड़कर देखने की भारतीय संस्कृति रही है। रामायण, महाभारत, पुराण, बृहत संहिता जैसे प्राचीन भारतीय साहित्य में जल चक्र की प्रक्रियाओं और परंपरागत जल संचय के तरीकों के बारे में उल्लेख मिलता है। महान कवि रहीम ने 'बिन पानी सब सून' जैसी अनमोल पंक्ति रचकर पूरी दुनिया को पानी की अहमियत का सन्देश दिया है।

जीवन के पनपने के लिए तीन मुख्य तत्व अहम होते हैं - पानी, हवा और सूरज की रोशनी। ब्रह्मांड में केवल हमारी पृथ्वी पर इन तीन तत्वों के संयोग से यहाँ जीवन मौजूद है। मंगल ग्रह पर पहले कभी पानी मौजूद था, इस बारे में वैज्ञानिक खोज जारी है। वैसे तो हमारी पृथ्वी पर करीब सत्तर प्रतिशत पानी मौजूद है मगर यह अनोखी बात है कि इतनी बड़ी जल राशि का एक प्रतिशत से भी कम हिस्सा मानव उपयोग के लिए उपलब्ध होता है। सीधे तौर पर समुद्र के पानी का इस्तेमाल हम पीने के लिए नहीं कर सकते। दरअसल पानी का एक प्राकृतिक चक्र होता है। बारिश का पानी जलाशयों से होता हुआ भूमि के अंदर पहुँचता है। हम अपने दैनिक जीवन में पानी से जुड़ी जरूरतों को पूरा करने के लिए भूमिगत जल पर निर्भर होते हैं। दुर्भाग्य से पिछले बीस वर्षों में हमने इस भूजल का इस कदर दोहन किया है कि आज देश के लगभग हर हिस्से में भूजल का स्तर बहुत नीचे लुढ़क गया है।

विश्व की करीब एक चौथाई आबादी को आज स्वच्छ पेयजल नहीं मिल रहा है। भारत के अधिकतर हिस्सों में जल संकट गहराता जा रहा है। जहाँ एक तरफ देश की आबादी बढ़ती जा रही है, वहीं लोगों की पानी से जुड़ी जरूरतें भी लगातार बढ़ रही हैं। लेकिन दूसरी ओर जलस्रोत तेजी के साथ सिकुड़ते जा रहे हैं।

21वीं सदी में पानी सबसे बड़ा मुद्दा बन चुका है। संयुक्त राष्ट्र संघ, विश्व बैंक और विश्व मुद्रा कोष के अध्ययन बताते हैं कि दुनिया के एक चौथाई से भी अधिक हिस्से में आज पानी नहीं है। तो वहीं दुनिया के करीब 40 देशों में घोर जल संकट है। एक अनुमान के अनुसार पानी की माँग हर 20 साल में दोगुनी हो जाती है और वहीं इसकी उपलब्धता एक चौथाई घट जाती है।

साल-दर-साल भूजल के लगातार दोहन की वजह से भूजल स्तर नीचे सरकता जा रहा है। आज से दस साल पहले भारत के जिन स्थानों पर तीस मीटर की खुदाई पर पानी मिल जाता था, वहाँ पानी के लिए आज 50 से लेकर 70 मीटर तक खुदाई करनी पड़ती है।

इस भूजल की हमारे समाज में अहम भूमिका है। भारत एक कृषि प्रधान देश है और खेतों

की सिंचाई का करीब सत्तर प्रतिशत भूजल से होती है। वहीं दूसरी ओर घरेलू काम-काज में होने वाली पानी की खपत का अस्सी प्रतिशत हिस्सा इसी भूजल से प्राप्त होता है। आज भूजल के घटते स्तर के पीछे सबसे बड़ा कारण हमारे द्वारा इसका लगातार और बिना सोचे-समझे दोहन है। जहाँ एक तरफ भूजल का अनियंत्रित दोहन हो रहा है तो दूसरी ओर पेड़-पौधों और पर्यावरण को भी नुकसान पहुँचाया जा रहा है। इसके नतीजे के तौर पर बारिश में भी कमी आई है। बरसात के पानी से भूजल प्राकृतिक रूप से रिचार्ज होता है। मगर पर्यावरण की हानि से मानसून और बारिश का लय बिगड़ गया है जिस वजह से भूजल की आवश्यक भरपाई नहीं हो पा रही है।

भूजल का घटता स्तर एक चेतावनी है कि हमने पर्यावरण को नुकसान पहुँचाना और पानी का दोहन जारी रखा तो हमें पीने का पानी भी मयस्सर नहीं होगा। हमारी लापरवाही, बढती आबादी, बिगड़ी हुई जीवन-शैली और पानी की बर्बादी के कारण आज हम पानी के गंभीर संकट से गुजर रहे हैं। पानी का संचय और उचित प्रयोग इस प्राकृतिक संसाधन को बचाने के सबसे कारगर उपाय हैं।

जल संरक्षण हमारी परम्परा

सामुदायिक स्तर पर स्थानीय लोगों की देख-रेख में पानी के संरक्षण के प्रयास हों तो इससे बेहतर कुछ नहीं हो सकता। स्थानीय समुदाय ही यह तय करे कि उन्हें अपने शहर, कस्बे, गाँव और मोहल्ले में पानी को बचाने के कौन से तरीके किस तरह इस्तेमाल करने हैं। ऐसा इसलिए जरूरी है क्योंकि इतिहास गवाह है कि भारत में पानी का संरक्षण हजारों साल से स्थानीय समुदाय करती आई है।

हमारी परम्पराएं, हमारे संस्कार, रीति-रिवाज और आदतें पानी से जुड़ी हुई थीं।

उद्योगों में पानी का जरूरत से ज्यादा इस्तेमाल रोकना होगा। यहाँ पानी को एक से अधिक बार प्रयोग यानी रिसाइक्लिंग करने वाली टेक्नॉलॉजी का सहारा लेना जरूरी कदम है। सब्सिडी की बिजली देने के लिए अक्सर घटिया गुणवत्ता वाले पंपसेट प्रयोग किये जाते हैं। ये भूजल को बेपरवाह होकर निकालते हैं। इस तरह के दोहन से देश के अनेक हिस्सों में भूजल का स्तर गंभीर रूप से नीचे चला गया है। इस वजह से उन स्थानों पर स्थानीय समुदाय के सामने पेय जल की समस्या पैदा हो गई है।

जिस तरह प्रकृति ने समूचे देश में नदियों का जाल बिछाया था, उसी प्रकार प्राचीन भारतीय समाज में कदम-कदम पर तालाब, कुएं, पोखर और बावड़ियाँ बनवाये गये थे। एक जमाने में हमारे देश में हैसियत का पैमाना ये तालाब और कुएं हुआ करते थे। भोपाल शहर का बड़ा तालाब राजा भोज की हैसियत का एक नायाब उदाहारण है। तालाब-कुएं बनवाने के पीछे दूसरा अहम मकसद पूरे समाज और गाँव के कल्याण की भावना हुआ करता था।

हमारी परंपराओं, उत्सव और मान्यताओं का रिश्ता मौसम और पानी से जुड़ा होने की वजह से पानी के संरक्षण को लेकर हम चिंता करते थे। आज परिवेश बदल गया और हमने अपनी सोच भी बदल डाली। हमने पानी का सम्मान करना छोड़ दिया। जिसका खामियाजा भी हम भुगत रहे हैं। विकास के नाम पर उद्योग और शहरीकरण के दबाव में तालाबों, पोखरों जैसे जलाशयों को पाट दिया गया। इससे एक तरफ पानी की किल्लत हो गई और दूसरी ओर चेन्नई जैसी बाढ़ और महाराष्ट्र में सूखे जैसी विकट समस्याएं भी पैदा हो गईं।

हमारी आदत में बदलाव से संभव है जल संरक्षण

आज हमारे देश में जल संसाधन को सहेजने की विशेष जरूरत है। आजादी के बाद हम प्राकृतिक संसाधनों के विनाश पर नज़र डालें तो हम पाते हैं कि विकास की राह में आगे बढने के लिए पानी, हवा, भूमि और जंगल को हमने गंभीर रूप से नुकसान पहुँचाया है। भारत की नदी प्रणाली समाप्त होती जा रही है। प्रदूषण से नदियों का दम घुट रहा है। वे अपने साथ गंदगी का अम्बार ढो रही हैं। डायरिया, हैजा, टायफाइड जैसी बीमारियों का स्रोत बन रही हैं। यह नदियों की बेहद दुर्भाग्यपूर्ण हालत है।

पानी को सहेजना हमारे आज और आने वाले कल के लिए जरूरी है। पानी का हमें समझदारी से प्रबंधन करना होगा और इस्तेमाल भी। कृषि क्षेत्र में पानी का उचित प्रयोग जरूरी है मगर दुरूपयोग सरासर गलत। वैज्ञानिकों से उम्मीद है कि वे शोध के द्वारा कम पानी में वृद्धि करने वाली और पर्याप्त पैदावार देने वाली फसलों को तैयार करेंगे। उद्योगों में पानी का जरूरत से ज्यादा इस्तेमाल रोकना होगा। यहाँ पानी को एक से अधिक बार प्रयोग यानी रिसाइक्लिंग करने वाली टेक्नॉलॉजी का सहारा लेना जरूरी कदम है। सब्सिडी की बिजली देने के लिए अक्सर घटिया गुणवत्ता वाले पंपसेट प्रयोग किये जाते हैं। ये भूजल को बेपरवाह होकर निकालते हैं। इस तरह के दोहन से देश के अनेक हिस्सों में भूजल का स्तर गंभीर रूप से नीचे चला गया है। इस वजह से उन स्थानों पर स्थानीय समुदाय के सामने पेय जल की समस्या पैदा हो गई है।

शहरों में पानी के परिवहन और वितरण के दौरान भी बड़ी मात्रा में पानी रिसकर बर्बाद हो जाता है। इस ओर गम्भीरता से ध्यान दिए जाने की जरूरत है। वहीं दूसरी ओर राष्ट्रहित में औद्योगिक और व्यावसायिक क्षेत्रों के साथ-साथ घरों में भी पानी की बर्बादी पर अंकुश लगाना हमारा परम कर्तव्य बनता है।

बारिश के पानी का संग्रह करके पानी से जुड़ी जरूरतों को पूरा किया जा सकता है और पानी के संरक्षण का यह एक बेहतर विकल्प है। सरकार के साथ-साथ सभी नागरिकों का दायित्व है कि हम एक साथ मिलकर पानी की हिफाजत करें। शहरों में घर की छतों पर और ग्रामीण इलाकों में कुएं बनाकर बारिश के पानी का संग्रह किया जा सकता है। इस विकल्प से भूजल पर हमारी निर्भरता मे कमी आएगी और इस तरह भूजल का स्तर ऊपर आ सकेगा।

जल संरक्षण की वैज्ञानिक व्यवस्था हमारे प्राचीन काल के समाज में भी रही है। भारत में जल प्रबंधन का इतिहास बहुत पुराना है और इस बात के प्रमाण भी प्राचीन सभ्यताओं के अवशेषों से मिले हैं। सिन्धु घाटी की खुदाई में अनेक जलाशयों के प्रमाण मिले हैं। हडप्पा काल में पानी की निकासी के अलावा कुआँ बनाने की कला का भी ज्ञान था। चन्द्रगुप्त मौर्य के शासन काल में भारत के किसान सिंचाई के साधनों जैसे बांध, तालाब बनाना जानते थे, साथ ही बारिश का अनुमान लगाना और जल प्रबंधन के बारे में भी उन्हें जानकारी थी। इलाहाबाद में आने वाली बाढ से बचने के लिए तालाबों और नहरों की परस्पर जुड़ी हुई प्रणालियों को बनाया गया था जिसके अवशेष आज भी कुछ स्थानों पर देखे जा सकते हैं।

हमारे देश में पानी के संग्रह और इसके प्रबंधन का इतिहास सदियों पुराना है। महाराष्ट्र के ताल, राजस्थान के कुंड, खड़ीन और बाड़ी, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के बंधी, जम्मू के पोखर, केरल के सुरंगम और कर्नाटक के कट्टा पानी को संजोने के बेहतरीन साधन थे। ये उपाय आज भी उतने ही कारगर है जितने बरसों पहले थे।

शहरों के साथ-साथ ग्रामीण इलाकों में भी भूजल स्तर में गिरावट दर्ज की जा रही है। पानी के संरक्षण के लिए ऐसे उपयोगी उपायों को अपनाने की जरूरत है जो सरल हो और किफायत भी। इसी तरह का एक उपाय है रेन वाटर हार्वेस्टिंग जो कि पानी के संरक्षण और पानी के प्रबंधन की असरदार विधियों में से एक है। इसमें बारिश के पानी को हम अपने लिए, पशुओं और पेड़-पौधों के लिए संचित करते हैं। इस विधि में बारिश का पानी घर या सोसाइटी की छत पर इकट्ठा किया जाता है और जरूरत के हिसाब से आगे खर्च किया जाता है।

आजकल शहरों के साथ-साथ ग्रामीण इलाकों में भी भूजल स्तर में गिरावट दर्ज की जा रही है। पानी के संरक्षण के लिए ऐसे उपयोगी उपायों को अपनाने की जरूरत है जो सरल हो और किफायत भी। इसी तरह का एक उपाय है रेन वाटर हार्वेस्टिंग जो कि पानी के संरक्षण और पानी के प्रबंधन की असरदार विधियों में से एक है। इसमें बारिश के पानी को हम अपने लिए, पशुओं और पेड़-पौधों के लिए संचित करते हैं। इस विधि में बारिश का पानी घर या सोसाइटी की छत पर इकट्ठा किया जाता है और जरूरत के हिसाब से आगे खर्च किया जाता है। रेन वाटर हार्वेस्टिंग के माध्यम से भूजल को भी रिचार्ज किया जाता है।

इस संचित पानी का उपयोग बरसात के बाद दूसरे मौसम में किया जा सकता है। भारत सहित पूरी दुनिया में पानी को सहेजने और संचित करने का यह उपाय बरसों से किया जाता रहा है। बारिश के पानी के भौतिक और रासायनिक गुण आम तौर पर भूजल से बेहतर होते हैं। वर्षा जल में केवल वायुमंडल का संक्रमण इसे थोड़ा बहुत दूषित करता है जिसे उचित रख-रखाव और साफ-सफाई के जरिये प्रयोग लायक बनाया जा सकता है। इस पानी का उपयोग पीने, सिंचाई, घरेलू काम-काज और पशुओं के पीने के लिए किया जाता है।

भारत जैसे बड़ी आबादी वाले देश में जहाँ भूजल का स्तर तेजी से नीचे खिसक रहा है, वहाँ पर रेन वाटर हार्वेस्टिंग का महत्त्व और बढ जाता है। इससे पानी की जरूरत को पूरा किया जाना और भूजल स्तर में आ रही गिरावट दोनों को कम किया जाना संभव है। पानी को सहेजने के लिए केवल हमें अपनी सोच और आदत में बदलाव लाना होगा। लोगों में पानी के महत्व से जुड़ी हुई जागरूकता लाकर यह काम पूरा किया जा सकता है। अपने रोजमर्रा के जीवन में छोटे-छोटे आसान कदम उठाकर हम बड़े बदलाव ला सकते हैं। हमें पानी की जितनी जरूरत हो, उतना ही पानी इस्तेमाल करें, घर हो या बाहर कहीं भी नल खुला न छोड़ें। स्कूटर-कार की धुलाई में कम से कम पानी खर्च करें। सोचिये अगर हम हर दिन थोड़ा ध्यान देकर अगर 5 लीटर पानी की बचत करें तो इस तरह पूरे साल हम 1825 लीटर पानी बचा सकते हैं। इसी तरह अगर देश के सभी नागरिक पानी बचाएं तो कितना बड़ा परिवर्तन आ सकता है। आइये पानी का संरक्षण करके और पर्यावरण को सुंदर बनाकर हम अपनी धरती को आज और आने वाले कल के लिए संवारें।

mmgore@vigyanprasar.gov.in

श्रद्धांजलि

डॉ. विनीता सिंघल

विगत दिनों डॉ. विनीता सिंघल का आकस्मिक निधन हो गया। वे 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' की नियमित विज्ञान लेखिका थीं। डॉ.विनीता सिंघल ने विज्ञान के अलग-अलग विषयों पर रोचक और सुबोध लेखन किया है। वे जीव विज्ञान में डी-लिट थीं और विज्ञान लोकप्रियकरण में उन्होंने एम.फिल किया था। विज्ञान लेखन और उसके प्रसार-प्रचार में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। लगभग तीन देशकों तक विज्ञान प्रगति, साइंस रिपोर्टर आदि विज्ञान पत्रिकाओं के संपादन से सम्बद्ध रहीं। उनके लेखन संसार बहुत वृहत है जिसमें लगभग चालीस किताबें और लगभग सात सौ मौलिक लेख प्रकाशित हैं। आपने बीस से अधिक पुस्तकों का संपादन और अनुवाद किया।

उनके आकस्मिक निधन पर 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' और आईसेक्ट परिवार भावभींनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

एक दुर्लभ रोग

न्यूरो एंडोक्राइन ट्यूमर

पिछले कुछ समय से बॉलीवुड स्टार इरफान खान की 'रेयर' बीमारी को लेकर तरह-तरह की अफवाहें फैल रही थीं। इन सब अफवाहों पर लगाम लगाते हुए स्वयं इरफान खान ने अपनी बीमारी का खुलासा कर दिया है कि वे न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर से पीड़ित हैं। अब ये सवाल उठ रहे हैं कि ये बीमारी होती क्या है, ये कैसे होती है और ये कितनी खतरनाक है। मोटे तौर पर इस तरह का ट्यूमर शरीर के उन हिस्सों में जन्म लेता है जो हार्मोन पैदा करते हैं जैसे कि एंडोक्राइन या अंतःस्रावी ग्रंथियां। शरीर के कुछ भाग जैसे कि फेफड़े, पेट और आंतों में न्यूरोएंडोक्राइन कोशिकाएं मौजूद होती हैं जो रक्त संचार सही करने और खाने को पचाने का काम करती हैं। यह ट्यूमर इन्हीं कोशिकाओं में बनता है।

एंडोक्राइन या अंतःस्रावी तंत्र

हमारे शरीर का अंतःस्रावी तंत्र ऐसी कोशिकाओं का बना होता है जो हार्मोन निस्स्रवित करती हैं। हार्मोन ऐसे रसायनिक पदार्थ होते हैं जो रक्त प्रवाह के साथ शरीर के विभिन्न भागों में पहुँचाए जाते हैं जिनका शरीर के विभिन्न अंगों, कोशिकाओं की क्रियाओं पर विशिष्ट प्रभाव होता है।

एंडोक्राइन या न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर

कोई ट्यूमर तब बनता है जब स्वस्थ कोशिकाओं में परिवर्तन होना शुरू होता है और वे बेहिसाब बढ़ना और एक पिंड का आकार लेना शुरू कर देती हैं। यह ट्यूमर कैंसरकारी या अकैंसरकारी हो सकता है। कैंसरकारी ट्यूमर असाध्य होता है अर्थात अगर जल्दी ही इसका निदान और उपचार न हो तो यह बढ़कर शरीर के अन्य भागों में फैल सकता है। जबकि अकैंसरकारी ट्यूमर को बिना किसी हानि के सर्जरी द्वारा निकाला जा सकता है।

एंडोक्राइन ट्यूमर (NET) एक ऐसा पिंड होता है जो शरीर के ऐसे भागों में बनता है जो हार्मोन का उत्पादन करते हैं। क्योंकि एंडोक्राइन ट्यूमर उन कोशिकाओं में बनता है जो हार्मोन बनाती हैं, इसलिए कोशिकाओं के साथ साथ ट्यूमर भी हार्मोन का उत्पादन कर सकता है। इससे गंभीर बीमारी हो सकती है।

न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर शरीर के न्यूरोएंडोक्राइन तंत्र की हार्मोन बनाने वाली कोशिकाओं में बनता है, जो हार्मोन उत्पादक एंडोक्राइन कोशिकाओं और तंत्रिका कोशिकाओं का संयोजन होती हैं। आमतौर से इसकी वृद्धि बहुत धीमी गति से होती है। आरम्भिक अवस्था में इसके कोई लक्षण भी दिखायी नहीं देते और जब इसका पता चलता है तो यह शरीर के कई अंगों में फैल चुका होता है।

क्योंकि न्यूरोएंडोक्राइन कोशिकाएं पूरे शरीर के विभिन्न अंगों जैसे कि फेफड़ों, अमाशय एवं आंतों सहित गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल ट्रैक्ट में पायी जाती हैं। न्यूरोएंडोक्राइन कोशिकाएं कुछ विशिष्ट काम करती हैं जैसे कि फेफड़ों से होकर गुजरने वाले वायु एवं रक्त के प्रवाह को नियंत्रित करना और गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल ट्रैक्ट से आहार का तेजी से गुजरना आदि। न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर कई प्रकार के हो सकते हैं, यह इस पर निर्भर करता है कि वह शरीर के किस भाग में विकसित हुआ है। सामान्यतया न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर आहार नली या अग्नाशय में विकसित होता है। इस ट्यूमर को सामूहिक रूप से गैस्ट्रोएंटीरोपैक्रिएटिक न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर कहते हैं।

आहारनली का न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर : यह सबसे अधिक पाया जाने वाला न्यूरोएंडो क्राइन ट्यूमर है। इसे कार्सिनॉयड भी कहते हैं। गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर, छोटी एवं बड़ी आंत सहित आहार नली के किसी भी भाग में हो सकते हैं। इसके लक्षण होते हैं: उदर या मलाशय में बेचैनी या दर्द, मचली और वमन, डायरिया, मलाशय से रक्तस्राव या मल में रक्त का आना, रक्त अल्पता और उसके कारण होने वाली थकान, सीने में जलन या अपाचन, अमाशय में अल्सर - इनके कारण सीने में जलन, अपाचन और सीने एवं उदर में दर्द, भार में कमी और आंत में अवरोध - इसके कारण उदर में दर्द और कब्ज।

अग्नाशय का न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर: यह अग्नाशय में विकसित होता है। ये अत्यंत दुर्लभ प्रकार के ट्यूमर हैं। इसके विभिन्न प्रारूप होते हैं:

- इंसुलिनोमस- जो इंसुलिन बनाते हैं।
- गैस्ट्रिनोमस- जो गैस्ट्रिन (भोजन को पचाने में सहायक हार्मोन) बनाते हैं।
- ग्लुकागोनोमस- यह ग्लुकागॉन; रक्त शर्करा के स्तर को बढ़ाने में सहायक हार्मोन बनाते हैं।
- वाइपोमस- यह पाचन तथा अन्य शारीरिक प्रक्रियाओं में सहायक वासोएक्टिव इंटेस्टाइनल पेप्टाइड बनाते हैं।
- सोमैटोस्टेटाइनोमा- जो पाचन में सहायक हार्मोन सोमैटोस्टेटिन बनाते हैं।

इनमें से कुछ ट्यूमर अग्नाशय के बाहर विकसित होते हैं। जैसे कि गैस्ट्रिनोमस को अंडाशय, गुर्दे, अमाशय और यकृत में भी विकसित होते देखा गया है। पैक्रिएटिक न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर के प्रमुख लक्षण इस प्रकार हैं: रक्त में ग्लूकोज का उच्च या निम्न उच्च स्तर, अतिसार, भूख न लगना या भार में कमी होना, कफ बनना, शरीर के किस्से भाग में गांठ बनना, मूत्र या मल त्याग की आदतों में बदलाव आना, बहुत अधिक भार बढ़ना या घटना, पीलिया जिसमें त्वचा पीली और आंखें सफेद हों, अचानक रक्तस्राव या स्राव होना, लगातार ज्वर होना या रात में पसीना आना, सिरदर्द होना, उत्तेजना बढ़ना, गैस्ट्रिक अल्सर होना, त्वचा पर चकत्ते पड़ना आदि। कुछ लोगों में बीमारी की शुरूआत से ही पोषक तत्वों जैसे कि निआसिन और प्रोटीनों की कमी हो जाती है। कुछ लोगों में ये लक्षण बाद में विकसित होते हैं।

फेफड़ों का न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर : यह फेफड़ों में विकसित होता है। फेफड़ों में विकसित होने वाला एनईटी अधिकतर कार्सिनॉयड ट्यूमर होता है। फेफड़ों में ट्यूमर अधिकतर वायुमार्गों में विकसित होता है जिसके लक्षण होते हैं: लगातार कफ बने रहना, कफ में खून का आना, सांस लेने में कठिनाई होना, थकान होना, न्यूमोनिया होना, कार्सिनॉड सिंड्रोम - इसमें त्वचा का छिलना, डायरिया और सांस में घरघराहट होना शामिल है।

एड्रीनल ग्रंथि का न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर या फीओक्रोमोसाइटोमा: फीओक्रोमोसाइटोमा एक दुर्लभ ट्यूमर है जो एड्रीनल ग्रंथि की क्रोमाफिन कोशिकाओं में बनता है। ये विशेषीकृत कोशिकाएं तनाव के समय एड्रीनेलिन हार्मोन निस्स्रवित करती हैं। फीओक्रोमोसाइटोमा अधिकतर एड्रीनल ग्रंथियों के भीतरी भाग एड्रीनल मेड्यूला में होता है। इस प्रकार के ट्यूमर से एड्रीनेलिन और नॉरएड्रीनेलिन हार्मोनों का उत्पादन बढ़ जाता है, जिससे रक्त चाप और हृदय गति बढ़ जाती है। हालांकि फीओक्रोमोसाइटोमा आमतौर से अकैंसरकारी होता है, फिर भी इससे जीवन को खतरा हो सकता है क्योंकि ट्यूमर बहुत बड़ी

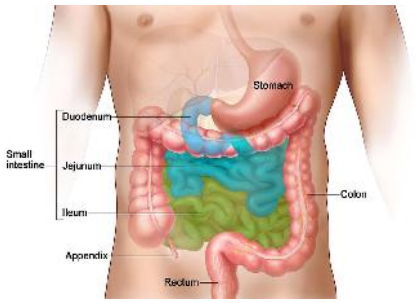

यह सबसे अधिक पाया जाने वाला न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर है। इसे कार्सिनॉयड भी कहते हैं। गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर, छोटी एवं बड़ी आंत सहित आहार नली के किसी भी भाग में हो सकते हैं। इसके लक्षण होते हैं: उदर या मलाशय में बेचैनी या दर्द, मचली और वमन, डायरिया, मलाशय से रक्तस्राव या मल में रक्त का आना, रक्त अल्पता और उसके कारण होने वाली थकान, सीने में जलन या अपाचन, अमाशय में अल्सर - इनके कारण सीने में जलन, अपाचन और सीने एवं उदर में दर्द, भार में कमी और आंत में अवरोध - इसके कारण उदर में दर्द और कब्ज।

मर्केल कोशिका कैंसर अत्यंत आक्रामक या तेजी से बढ़ने वाला दुर्लभ कैंसर होता है। यह त्वचा के ठीक नीचे हार्मोन उत्पादक कोशिकाओं, हेयर फॉलिकिल्स में होता है। यह आमतौर से सिर और गर्दन वाले भाग में होता है। मर्केल कोशिका कैंसर को त्वचा का न्यूरोएंडोक्राइन कार्सिनोमा या ट्रेबेकुलर कैंसर भी कहते हैं। त्वचा पर लाल, गुलाबी या नीले रंग के दर्द रहित कड़े चमकदार पिंड होना ही मर्केल कोशिका कैंसर के प्रमुख लक्षण होते हैं।

मात्रा में एड्रीनेलिन रक्त प्रवाह में निर्मुक्त कर सकता है। फीओक्रोमोसाइटोमा से पीड़ित अस्सी प्रतिशत लोगों में ट्यूमर एक ही एड्रीनल ग्रंथि में होता है, दस प्रतिशत लोगों में दोनों ग्रंथियों में, जबकि दस प्रतिशत लोगों में ट्यूमर एड्रीनल ग्रंथियों के बाहर होता है।

इसके लक्षण होते हैं: उच्च रक्तचाप होना, उत्तेजना के दौरे पड़ना, ज्वर आना, सिरदर्द होना, पसीना आना, मचली होना, वमन होना, चिपचिपी त्वचा, नाड़ी की गति तेज होना और दिल की धड़कन तेज होना।

त्वचा का न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर या मर्केल कोशिका कैंसर: मर्केल कोशिका कैंसर अत्यंत आक्रामक, या तेजी से बढ़ने वाला दुर्लभ कैंसर होता है। यह त्वचा के ठीक नीचे हार्मोन उत्पादक कोशिकाओं, हेयर फॉलिकिल्स में होता है। यह आमतौर से सिर और गर्दन वाले भाग में होता है। मर्केल कोशिका कैंसर को त्वचा का न्यूरोएंडोक्राइन कार्सिनोमा या ट्रेबेकुलर कैंसर भी कहते हैं। त्वचा पर लाल, गुलाबी या नीले रंग के दर्द रहित कड़े, चमकदार पिंड होना ही मर्केल कोशिका कैंसर के प्रमुख लक्षण होते हैं।

खतरे के कारक

किसी भी व्यक्ति में निम्न कारक न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर विकसित होने के खतरे को बढ़ा सकते हैं:

- **आयु :** फीओक्रोमोसाइटोमा सामान्यतया 40 से 60 वर्ष आयु के लोगों में होता है। मर्केल कोशिका कैंसर 70 वर्ष से अधिक आयु के लोगों में होता है।
- **लिंग :** फीओक्रोमोसाइटोमा स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक होता है। मर्केल कोशिका कैंसर भी स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में ही अधिक होता है।
- **जाति/नस्ल :** मर्केल कोशिका कैंसर अकसर श्वेत लोगों में होता है। कुछ अश्वेतों और पॉलीनेशिया के लोगों में भी यह रोग देखा गया है।
- **पारिवारिक इतिवृत्त :** डॉक्टरों के अनुसार यह जानलेवा बीमारी का दस प्रतिशत कारण वंशानुगत, या आनुवंशिक होता है। मल्टीपिल एंडोक्राइन निओप्लेसिया टाइप 1 (MEN1) एक वंशानुगत अवस्था है। ट्यूमर के पिट्यूटरी ग्रंथि, पैराथायरॉयड ग्रंथि और अग्नाशय में विकसित होने से खतरा बढ़ जाता है। मल्टीपिल एंडोक्राइन निओप्लेसिया टाइप 2 (MEN2) फीओ-क्रोमोसाइटोमा सहित मेड्यूलरी थायरॉयड कैंसर तथा अन्य प्रकार के कैंसरों से संबंधित वंशानुगत अवस्था होती है।
- **कमजोर प्रतिरक्षी तंत्र:** ह्यूमन इम्म्युनोडि-फिशियेंसी वाइरस (HIV) से पीड़ित लोग जिन्हें एक्वायर्ड इम्म्युनोडिफिशियेंसी सिंड्रोम (AIDS) होता है, और जिन लोगों का प्रतिरक्षी तंत्र अंग प्रत्यारोपण के कारण कमजोर हो गया हो, उनमें न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर विकसित होने का खतरा बहुत बढ़ जाता है।
- मर्केल कोशिका पोलिओवाइरस (MCV) शोधों में इस वाइरस और मर्केल कोशिका कैंसर के बीच संबंध पाया गया है। मर्केल कोशिका कैंसर के लगभग 80 प्रतिशत रोगियों में एमसीवी पाया गया है। हालांकि वैज्ञानिकों का मानना है कि इसके लिए और अनुसंधान किए जाने की जरूरत है।
- **आर्सेनिक के संपर्क में आना :** वैज्ञानिकों का मानना है कि आर्सेनिक जो एक प्रकार का विष होता है, के संपर्क में आना भी मर्केल कोशिका कैंसर के खतरे को बढ़ा सकता है।
- **डायबिटीज :** जो लोग लंबे समय तक डायबिटीज से पीड़ित होते हैं, उनमें न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर बनने का खतरा बढ़ जाता है। यह खतरा विशेष रूप से स्त्रियों में होता है।
- **कुछ अन्य मेडीकल अवस्थाएं :** अगर बहुत लंबे समय तक आंतों या अमाशय की लाइनिंग में सूजन रहे, इस अवस्था को क्रानिक एट्रॉफिक गैस्ट्रिाइटिस कहते हैं, अमाशय या आंतों में न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर विकसित होने का खतरा होता है।

न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर होने के कुछ अन्य कारकों का भी अध्ययन किया गया है लेकिन अभी पूरी तरह यह सुनिश्चित नहीं हो सका है कि ये न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर के खतरे को जन्म देते हैं, जैसे कि

- **संतृप्त वसाएं :** एक अमेरिकी अध्ययन में देख गया है कि जो लोग अधिक मात्रा में संतृप्त वसाओं का सेवन करते हैं, उनकी छोटी आंत में, कम वसा का सेवन करने वालों की अपेक्षा न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर का खतरा ज्यादा होता है। लेकिन अभी इसे पूरी तरह सिद्ध करने के लिए कि वसा का न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर से कोई संबंध है, और अनुसंधानों की आवश्यकता है।
- **धूम्रपान और अल्कोहल :** धूम्रपान और अल्कोहल का सेवन संभवतः अग्नाशय में न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर के खतरे को बढ़ा सकते हैं लेकिन निश्चित रूप से कुछ कह पाना अभी संभव नहीं है।
- **मोटापा :** मोटापा अनेक बीमारियों का घर होता है। अमेरिका में किए गए अध्ययनों के अनुसार देखा गया है कि मोटे लोगों की छोटी आंत में न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर का खतरा अधिक होता है।
- **हार्मोन रिप्लेसमेंट** थिरैपी (HRT) : हार्मोन रिप्लेसमेंट थिरैपी छोटी आंत में न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर के खतरे को दोगुना कर देती है। लेकिन विभिन्न प्रकार की हार्मोन थिरैपी और उसमें न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर विकसित होने के संभावित खतरे पर और अध्ययन किए जाने की आवश्यकता है।

उपचार

डॉक्टर न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर के उपचार के लिए विभिन्न विधियों का प्रयोग करते हैं। लेकिन जब ट्यूमर के स्पष्ट लक्षण सामने नहीं दिखायी तब सीधे कोई उपचार करना कठिन हो जाता है। न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर बढ़ने की दर अलग अलग होती है लेकिन कभी कभी वे बहुत धीमी गति से बढ़ते हैं। कभी कभी तो ये महीनों-सालों तक बिना बढ़े यूं ही पड़े रहते हैं। ऐसे में डॉक्टर स्कैनिंग के जरिए केवल इन पर नजर रखते हैं। लेकिन जब ट्यूमर बढ़ने लगता है या उसके लक्षण प्रकट होने लगते हैं तो अगर संभव हो तो ट्यूमर को निकालने के लिए सर्जरी की जाती है। अगर सर्जरी करना संभव न हो तो लक्षणों के अनुसार ट्यूमर के नियंत्रण के लिए अनेक उपचार आजमाए जाते हैं। कई बार एक साथ कई प्रकार के उपचार किए जाते हैं। इनमें शामिल हैं:

सर्जरी : फीओक्रोमोसाइटोमा और मर्केल कोशिका कैंसर के लिए सर्जरी ही प्रमुख उपचार है। सर्जरी के दौरान, डॉक्टर ट्यूमर के साथ, उसके आस पास की कुछ स्वस्थ कोशिकाओं को भी निकाल देते हैं। इसके लिए अधिकतर लैप्रोस्कोपिक सर्जरी की जाती है।

जो लोग अधिक मात्रा में संतृप्त वसाओं का सेवन करते हैं, उनकी छोटी आंत में, कम वसा का सेवन करने वालों की अपेक्षा न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर का खतरा ज्यादा होता है। लेकिन अभी इसे पूरी तरह सिद्ध करने के लिए कि वसा का न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर से कोई संबंध है और अनुसंधानों की आवश्यकता है।

अगर सर्जरी से ट्यूमर को निकालना संभव न हो डॉक्टर दूसरे उपचारों की सलाह देते हैं।

रेडिएशन थिरैपी : रेडिएशन थिरैपी में ट्यूमर कोशिकाओं को नष्ट करने के लिए उच्च ऊर्जा एक्स-किरणों या अन्य कणों का प्रयोग किया जाता है। आमतौर से रेडिएशन थिरैपी की सलाह तब दी जाती है जब ट्यूमर ऐसे स्थान पर हो जहाँ सर्जरी कर पाना कठिन या असंभव हो। जब न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर फैलने लगता है, तब भी रेडिएशन थिरैपी की जाती है। सामान्यतया दिए जाने वाले रेडिएशन उपचार को एक्सटरनल-बीम रेडिएशन थिरैपी कहते हैं क्योंकि इसमें शरीर के बाहर से मशीन द्वारा रेडिएशन दिया जाता है। जब रेडिएशन उपचार देने के लिए इम्प्लांट का उपयोग किया जाता है तो इसे इन्टरनल रेडिएशन थिरैपी या ब्रेकीथिरैपी कहते हैं। रेडिएशन थिरैपी एक निश्चित अवधि में, निश्चित संख्या में उपचार दिए जाते हैं। मर्केल कोशिका कैंसर के लिए, अकसर रोग की पहली और दूसरी अवस्था में सर्जरी के बाद रेडिएशन थिरैपी दी जाती है। इसे एडजुवेंट थिरैपी कहते हैं। थकान महसूस होना, त्वचा पर चकत्ते बनना, पेट का अपसेट होना या अतिसार होना रेडिएशन थिरैपी के कुछ पार्श्व प्रभाव हैं जो उपचार खत्म होने के बाद स्वयं ही खत्म हो जाते हैं।

कीमोथिरैपी : कीमोथिरैपी में कोशिकाओं के बढ़ने और विभाजित होने की क्षमता को रोक कर, ट्यूमर कोशिकाओं को नष्ट किया जाता है। इसमें शरीर के किसी भी भाग में ट्यूमर कोशिकाओं तक रसायनों को रक्त प्रवाह के जरिए पहुँचाया जाता है। इसमें रोगी को एक बार में एक औषधि या विभिन्न औषधियों के संयोजन को आंतरशिरीय रूप से या गोली के रूप में दिया जाता है। कीमोथिरैपी के पार्श्व प्रभाव व्यक्ति विशेष पर या दी गई औषधि की मात्रा पर निर्भर करते हैं। इनमें थकान, किसी प्रकार का संक्रमण, मचली और वमन, भूख की कमी और डायरिया, बालों का झड़ना आदि प्रमुख हैं।

टार्गेटेड थैरेपी : टार्गेटेड थैरेपी या लक्षित उपचार में, उपचार का लक्ष्य मुख्यतः ट्यूमर की विशिष्ट जीन, प्रोटीन, या ऊतकों के आस पास का वह वातावरण होता है जो इसकी वृद्धि में योगदान देता है। इस उपचार से ट्यूमर कोशिकाओं की वृद्धि और प्रसार रुक जाता है

रेडिएशन थैरेपी में ट्यूमन कोशिकाओं को नष्ट करने के लिए उच्च ऊर्जा एक्स-किरणों या अन्य कणों का प्रयोग किया जाता है। आमतौर से रेडिएशन थैरेपी की सलाह तब दी जाती है जब ट्यूमर ऐसे स्थान पर हो जहाँ सर्जरी कर पाना कठिन या असंभव हो। जब न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर फैलने लगता है तब भी रेडिएशन थैरेपी की जाती है।

और स्वस्थ कोशिकाओं को कुछ खास नुकसान नहीं होता। अध्ययनों में देखा गया है कि सभी ट्यूमरों का समान लक्ष्य नहीं होता। प्रभावी उपचार के लिए पहले सही जीन, प्रोटीन और अन्य कारकों का पता लगाने के लिए अनेक परीक्षण किए जाते हैं।

न्यूरोएंडोक्राइन ट्यूमर का निदान और उपचार दोनों ही ट्यूमर के प्रकार, इसके स्थान के साथ साथ इस पर निर्भर करते हैं कि यह अतिरिक्त हार्मोन का उत्पादन कर रहा है या नहीं, यह कितना आक्रामक है और यह शरीर के अन्य भागों तक फैला है या नहीं। वैज्ञानिक इस बीमारी के उपचार के लिए नए नए तरीकों की खोज में जुटे हैं। डॉक्टरों का मानना है कि यह बीमारी बेहद दुर्लभ तो है लेकिन अगर समय रहते इसका पता लग जाए तो यह लाइलाज नहीं है। इसका खतरा सबसे अधिक चालीस वर्ष की आयु के आस पास के लोगों को अधिक होता है। रक्त चाप, सिरदर्द और बहुत ज्यादा पसीना आने पर इस उम्र के लोगों को बिना देर किए तुरंत जांच करानी चाहिए।

vineeta_niscom@yahoo.com

सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी

संजय गोस्वामी

सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी धातु फिनिश की एक ऐसी तकनीक है जो इलेक्ट्रोलाइटिक प्रक्रिया के माध्यम किसी धातु पर दूसरे धातु या जंगरोधी कोटिंग की एक महीन परत का जमाव विभिन्न गुण और विशेषताएं, जैसे जंग-संरक्षण, बढ़ी हुई सतह कठोरता, चमक, रंग, ताप रोधी के आधार पर किया जाता है वे धातु के सौंदर्य मूल्य को भी जोड़ते हैं यानि पुरानी जंग लगी धातु या दीवारों की रौनक को कोटिंग द्वारा निखारने का काम करते हैं। इसमें सतह उपचार, पेंट, इलेक्ट्रोड प्रतिक्रियाओं, इलेक्ट्रोलाइटिक चालकता, फैराडे के इलेक्ट्रोलिसिस का नियम, पीएच माप, सरंध्रता, इलेक्ट्रोडोडेपोसिट्स का परीक्षण आदि की जानकारी दी जाती है हमारे देश में इस प्रौद्योगिकी के विज्ञान पर विशेष ध्यान देने के साथ, धातु फिनिशरों, उद्योगपतियों, डिजाइनरों और सर्फेस कोटिंग पेशेवरों को विनिर्माण इंजीनियरिंग की प्रगति को पूरा करने और बढ़ावा देने के लिए एक बेहतर तकनीकी पाठ्यक्रम कुछ तकनीकी कॉलेज द्वारा सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी में डिग्री प्रदान किया जा रहा है। धातु कोटिंग्स को दो तरीकों में वर्गीकृत किया जा सकता है-

- **कैथोडिककोटिंग:** कैथोडिक कोटिंग ने मूल धातु और पर्यावरण के बीच एक भौतिक अवरोध प्रदान किया जाता है। यदि किसी सामग्री में छिद्र, पिनहोल जैसी कोई भी दोष हो तो, कैथोडिक कोटिंग प्रदान की जाएगी, ऐसे मामलों में कोटिंग के रूप में क्रोमियम, स्टील, चाँदी(Ag), गोल्ड आदि धातु का लेप लगाते हैं।

  एक रासायनिक प्रतिक्रिया जो धातु के विघटन और H_2 गैस के साथ होती है।

  एसिड माध्यम में एक विशिष्ट धातु M के क्षरण पर समीकरण-

  $M \rightarrow M + n + ne$ $\quad$ $2H^{+} + 2e \rightarrow H_2$

  यह समीकरण इंगित करता है कि संरचना में इलेक्ट्रॉनों का जोड़ धातु के विघटन के लिए होती है। कैथोडिक संरक्षण आमतौर पर दो प्रकार के होते हैं:

  1) गैल्वेनिक युग्मन द्वारा 2) एक बाहरी बिजली की आपूर्ति द्वारा।

- **एनोडिक कोटिंग :** मूल धातु और पर्यावरण के बीच भौतिक बाधा के अलावा, यह बेस धातु और गैल्वेनिक कार्रवाई द्वारा संरक्षित बेस मेटल के लिए एक गैल्वेनिक संरक्षण के रूप में कार्य करता है। यदि सामग्री में दरारें, पीटिंग, पोर्सिटी, पिनहोल जैसी कोई भी खराबी है, तो एनोडिक कोटिंग प्रदान की जाती, ऐसे में ये कोटिंग स्टील पर जस्ता, अल्युमीनियम और निकल हैं।

सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर साइंस, धातु इंजीनियरिंग, पेंट टेक्नॉलॉजी और रासायनिक इंजीनियरिंग के साथ मिला हुआ बहुत ही रोचक इंजीनियरिंग क्षेत्र है। वास्तव में सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी, सर्फेस इंजीनियरिंग, पेंट टेक्नॉलॉजी, धातु इंजीनियरिंग, पेंट टेक्नॉलॉजी, कम्प्यूटर, मैकेनिकल, इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग के तालमेल का ही रूप है। सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी का विभिन्न उद्योगों जैसे पेट्रोकेमिकल, परमाणु, एयरोस्पेस, क्रायोजेनिक, चिकित्सा, समुद्री, रक्षा, इलेक्ट्रॉनिक्स, इलेक्ट्रो केमिकल, इस्पात, प्रिंटिंग उद्योग आदि में कई अनुप्रयोग है। सतह के उपचार, कोटिंग द्वारा डिवाइस का जीवनकाल का विस्तार, उपकरणों का अच्छा रख-रखाव उत्पादकता, गुणवत्ता नियंत्रण, लागत नियंत्रण और कोटिंग पर्यवेक्षण के लिए

संजय गोस्वामी विगत पंद्रह वर्षों से विज्ञान लेखन से जुड़े हैं आपने हिन्दी विज्ञान के क्षेत्र में तीन सौ से अधिक कॅरियर लेख लिखे हैं जो विज्ञान विषयक होते हैं। 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिये' में वे विगत लगभग पांच वर्षों से शृंखलाबद्ध लिख रहे हैं। इसके अतिरिक्त विज्ञान लेख, विज्ञान समाचार, विज्ञान कविता, विज्ञान रपट, विज्ञान समीक्षा आदि का लेखन और प्रकाशन हुआ है। कई पुरस्कारों से सम्मानित संजय गोस्वामी हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद्, भा.प.अ. केन्द्र, मुंबई के कार्यकारी सदस्य हैं। आप इन दिनों मुंबई में रहकर हिन्दी विज्ञान पत्रिका में लेखन एवं संपादन से संबद्ध हैं।

तकनीकी कौशल प्रदान करना इस कोर्स का लक्ष्य है। इसकी पाठ्यक्रम सामग्री को इलेक्ट्रोप्लेटिंग और धातु परिष्करण उद्योग की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विशेषज्ञों द्वारा तैयार किया गया है एयरोस्पेस में कोटिंग्स का उपयोग किया जाता है, विशेष रूप से विमान टरबाइन इंजन के लिए थर्मल स्प्रे कोटिंग्स का उपयोग होता है। थर्मो-डियूज़न कोटिंग्स अति सघन वनैडियम कार्बाइड पर आधारित हैं। कोटिंग्स एक उच्च स्तर की संक्षारण सुरक्षा प्रदान करते हैं, जो एक सुरक्षात्मक परत का निर्माण करती है जहाँ संक्षारण आमतौर पर बनता है जो सतह पर एक कोटिंग के साथ आंशिक रूप से सब्सट्रेट में फैल जाती है। यह प्रक्रिया सब्सट्रेट की सतह पर किसी भी सूक्ष्म दरारें, दरारें या छिद्र को ठीक करने में महत्वपूर्ण है।

क्षेत्र

उद्योगों में सरफेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी के तेजी से बढ़ते क्षेत्र को देखते हुए अत्यधिक कुशल टेक्नोक्रेट्स बनाने के लिए सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी जैसे नये कोर्स को तैयार किया गया है जो निर्माण उद्योग (हाउसिंग एंड कमर्शियल बिल्डिंग), इन्फ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट (पोर्ट्स, ऑफशोर स्ट्रक्चर, पाइपलाइन, ब्रिज इत्यादि) के विकास में हाथ बढ़ाता है। स्नातक कोटिंग इंजीनियर को रोजगार की कोई कमी नहीं है ऑटोमोटिव इंडस्ट्री, शिप बिल्डिंग इंडस्ट्री, हैवी इंजीनियरिंग इंडस्ट्री, प्रिंटिंग, इंक इंडस्ट्री, पैकेजिंग इंडस्ट्री आदि जैसे इंडस्ट्रीज कोटिंग इंजीनियर को हाथों-हाथ जाब दे रहें हैं।

अध्ययन

धातु में दो प्रकार की सामग्री होती है पहला लौह धातु, दूसरा अलौह धातु। लौह धातु दो प्रकार की होती है पहला कार्बन स्टील दूसरा स्टेनलेस स्टील माइल्ड या कार्बन स्टील, स्टील का सबसे सामान्य रूप है और इसकी कम लागत और

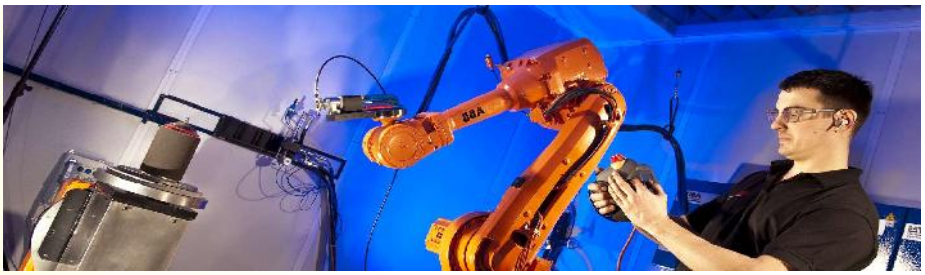

बहुत कठोर होने के कारण यह निर्माण की मुख्य सामग्री है। जिसमें प्रमुख रूप से लोहा(Fe) होता है। इसे कार्बन स्टील या माइल्ड स्टील कहते हैं। इसमें लोहा, कार्बन, मैगनीज के साथ सिलिकान, गन्धक तथा फास्फोरस अवांछनीय तत्व होते हैं कार्बन स्टील में बारिश, बर्फ, धूल, कालिख, राख, हवा और विकिरण (प्रकाश, गर्मी, आदि) के संपर्क में आने पर संक्षारण होता हैं। कार्बन स्टील जब ऑक्सीजन तथा पानी के साथ प्रतिक्रिया करता है तो आयरन हाईड्रोक्साईड बनाता है। यह आयरन हाईड्रोक्साईड सूखने के बाद फेरिक ऑक्साईड में बदल जाता है, जिसे संक्षारण कहा जाता है। कार्बन स्टील में अच्छी ताकत होती है, और इसे वाहनों (जैसे कारों और जहाजों) से लेकर निर्माण सामग्री तक के उपयोग के लिए अलग-अलग आकार में मोड़ा जा सकता है या वेल्ड किया जा सकता है।

साधारण इस्पात की अपेक्षा ये अधिक ताप सह सकते हैं। इस्पात में ये गुण क्रोमियम मिलाने से उत्पन्न होते हैं। इसमें 12-20% क्रोमियम, 8-13% निकल तथा लोहा होता है। क्रोमियम इस्पात के बाह्य तल की परत वायु से प्रतिक्रिया कर क्रोमियम आक्साइड बना देता है जिससे इस्पात पर पानी और हवा का प्रभाव निष्क्रिय हो जाता है। अतः स्टेनलेस स्टील पर जंग रोधी कोटिंग नहीं की जाती है किन्तु कार्बन स्टील बहुत सस्ता, उच्च शक्ति, कठोरता और आसान उपलब्ध होने के कारण यह मोटर वाहन, निर्माण, सैन्य हथियारों, एयरोस्पेस और अन्य प्रमुख उद्योगों में विभिन्न अनुप्रयोगों में उपयोग किए जाते हैं। कार्बन स्टील को संक्षारण से बचाने के लिये अतः जंग रोधी कोटिंग की जाती है चूंकि पहले सतह का उपचार किया जाता है और फिर सुरक्षात्मक कोटिंग की जाती है इसलिये इस ब्रांच का नाम सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी है यानि शुरू में सतह उपचार और उसके बाद धातु पर उपयुक्त कोटिंग करना है संक्षारण के कारण भारी स्क्रैप जमा हो जाता है जो एक ठोस अपशिष्ट की तरह होता है क्योंकि जंग लगे इस्पात का रिसाईकलिंग नहीं कर सकते हैं इस ठोस अपशिष्ट का उपचार करना एक मंहगा और जटिल प्रक्रिया होता है आज संक्षारण सभी उद्योग की एक प्रमुख समस्या है।

कार्य

प्रमुख उद्योगों में धातु कोटिंग के लिए तीन तरीके से होती है।

भौतिक विधि: यह विधि दो समूहों में वर्गीकृत होती है समूह 1: उच्च तापमान विधियों द्वारा- ये हॉट-डिप कोटिंग (Al, Zn, Sn आदि), स्प्रे यूजिंग, एलुमिनाइजिंग आदि हैं। हॉट-डिप गैल्वनाइजिंग, (ए) हॉट-डिप और (बी) इलेक्ट्रोलाइटिक गैल्वनाइजिंग के सिद्धांत पर आधारित है। नॉनऑक्साइडिडाइजिंग प्रीहेटिंग फर्नेस के माध्यम से धातु को ठंड कम करने के बाद कठोर स्ट्रिप्स को सीधे लेपित किया जाता है, जस्ता के साथ स्टील कोटिंग के लिए हॉट-डिप गैल्वनाइजिंग सबसे आम प्रक्रिया है। समूह 2: कम तापमान विधियों द्वारा- ये धातु छिड़काव विधि और कैथोड स्पटरिंग हैं।

रासायनिक विधि : इस विधि को भी दो समूहों में वर्गीकृत किया गया है :

समूह 1 : उच्च तापमान विधियों द्वारा। ये रासायनिक वाष्प जमाव, इलेक्ट्रोलस चढ़ाना, क्रोमिंग, एलुमिनाइजिंग आदि हैं।

समूह 2 : कम तापमान विधियों द्वारा। ये इलेक्ट्रोप्लेटिंग, एनोडाइजिंग, क्रोमेटिंग, फॉस्फेटिंग, वैक्यूम डिपोजिशन आदि हैं।

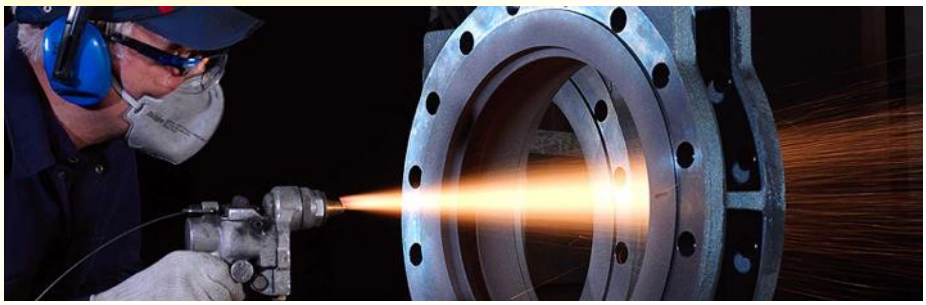

- **तकनीकी विधि:** ये विधि पेंटिंग, मैकेनिकल प्लेटिंग, क्लैडिंग आदि हैं।

उच्च गुणवत्ता धातु को बेहतर बनाने के लिए प्रक्रिया और विस्तार करने के लिए धातु में कोटिंग का उपयोग किया जाता है। विमान अनुप्रयोगों के लिए सुपर एलॉय मिश्र धातु, मिश्र धातु के लिए कोटिंग्स, विमान के टरबाइन इंजनों के लिए थर्मल स्प्रे कोटिंग, सामग्री-थर्मल बैरियर कोटिंग्स किया जाता है सरफेस कोटिंग टेक्नॉलॉजीज में स्वीकृति के मानक जैसे आईएस, एएसटीएम, बीआईएस के आधार पर मिश्र धातु, तांबा, पीतल, चांदी, सोना और स्टेनलेस स्टील्स सहित अन्य धातु सतहों की कोटिंग्स करने के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है और प्रक्रियाओं के आधार पर भौतिक और रासायनिक वाष्प जमाव तकनीक, थर्मल और प्लाज़्मा छिड़काव, आयन, इलेक्ट्रॉन और लेज़र बीम, थर्मो-केमिकल ट्रीटमेंट, गीले रासायनिक और विद्युत रासायनिक प्रक्रियाओं जैसे चढ़ाना, सोल-जेल कोटिंग, एनोडाइज़ेशन, प्लाज्मा जैसी ऊर्जा तकनीकों द्वारा अवगत कराया जाता है सतही संशोधन में सरफेस कोटिंग टेक्नोलॉजिस्ट इलेक्ट्रोलाइटिक ऑक्सीकरण, पेंटिंग की नई समझ और जानकारी हासिल करते हैं । पॉलिएस्टर, पॉलीयुरेथेन और प्लास्टिसोल लोकप्रिय कार्बनिक कोटिंग्स हैं। पीटीएफई, पीएफए और एफईपी सहित उच्च तकनीक वाले ऑर्गेनिक लोरोपॉलीमर आज उपलब्ध सबसे व्यापक रूप से उपयोग किए जाने वाले कुछ कोटिंग्स हैं। एपॉक्सी कोटिंग्स कंक्रीट और स्टील की रक्षा करते हैं जो एसिड मिस्ट, कार्बनिक अम्ल और पानी जैसे संक्षारक रसायनों जैसे स्रोतों से हल्के रासायनिक के संपर्क में होते हैं। कोटिंग सामग्री का मूल्यांकन करने के अलावा, डिजाइनर को सर्वश्रेष्ठ उच्च तापमान कोटिंग प्रणाली का चयन करने के लिए कई अन्य इंजीनियरिंग चर रासायनिक (धातुकर्म), प्रसंस्करण यांत्रिक और पर्यावरण रासायनिक (धातुकर्म), प्रसंस्करण यांत्रिक और पर्यावरण को ध्यान में रखना चाहिए। सिरेमिक से लेकर शुद्ध रूप से कार्बनिक के कोटिंग्स में बहुत अलग गुण हैं सामान्य उपयोग में तीन प्रकार के प्राइमर उद्योग में करते हैं: प्रीकोट्स, प्राइमर सर्फर्स और प्राइमर सीलर्स। प्राइमर के ऊपर टॉपकोट की कोटिंग की जाती है। टॉपकोट में ऐक्रेलिक लैक्क्वेर्स, ऐक्रेलिक एनामेल्स और पॉलीयुरेथेनेस आदि हैं। अतः एक कुशल कोटिंग इंजीनियर को पॉलिमर इंजीनियरिंग के बारे में पता होना चाहिए आदि। इलेक्ट्रोप्लेटिंग प्रक्रिया में बड़े पैमाने पर नौकरी विनिर्माण संयंत्रों ऑटोमोबाइल, साइकिल, इंजीनियरिंग और कई अन्य उद्योग में होते हैं उद्योग में धातुओं में सुरक्षात्मक कोटिंग तीन प्रकार के कोटिंग्स को परिभाषित करते हैं। जो धातु कोटिंग, कार्बनिक और अकार्बनिक कोटिंग्स हैं। कुछ खास इमारतें को अक्सर जस्ती इस्पात से बनाया जाता है, जिस पर एक प्रकार का संक्षारण प्रतिरोधी कोटिंग होती है। पॉलीसोसायनेट (क्रॉस-लिंकर), पॉलीविनाइल क्लोराइड, एसीटेट नाइट्रोसेल्युलोज, पॉलीक्रिलेट पॉलीविनाइलिडीन क्लोराइड, पॉली -विनाइल ब्यूटिरल अमाइन (क्रॉस-लिंकर), डायन बहुलक, पॉलीसोसायनेट प्रीपोलीमर, एपॉक्सी पॉलीयूरेथेन, हाइड्रॉक्सिल पॉलीविनाइल क्लोराइड, एसीटेट एपॉक्सी पॉलीविनाइल क्लोराइड, एसिटेट पॉलीविनाइल क्लोराइड, प्रोपियोनेट संतृप्त और पॉलिएस्टर कार्बनिक कोटिंग्स हैं। इसमें पॉलिएस्टर, पॉलीयुरेथेन, एक्सयालन और प्लास्टिसोल लोकप्रिय कार्बनिक कोटिंग्स हैं। कोटिंग्स के लिए धातु की सतह का अनुप्रयोग विभिन्न प्रकार से किया जाता है पेंट्स, पिगमेंट, रेजिन और वार्निश का अध्ययन कोटिंग प्रौद्योगिकी के लिए प्रमुख है। एक्सयालन कोटिंग्स् लोरोकार्बन कोटिंग्स हैं जिसमें शुष्क स्नेहक होते हैं। कच्चे एपॉक्सी को विशेष रूप से ग्लूइंग अनुप्रयोगों के लिए डिज़ाइन किया गया है अकार्बनिक कोटिंग्स पॉलीमर-आधारित औद्योगिक कोटिंग है। वह कुचालक, अत्यधिक संक्षारण प्रतिरोधी, बहुत टिकाऊ और बहुत लचीला उत्कृष्ट रसायन है और कठोर वातावरण का सामना कर सकता है। लेकिन पॉलिमर/प्लास्टिक के कोटिंग उच्च ताप नहीं सह सकता है जहाँ वेल्डिंग करना होता है वहाँ पेंट जल सकता है ऐसे यंत्रों में धातु की कोटिंग इलेक्ट्रोप्लेटिंग के द्वारा की जाती है।

स्वास्थ्य और जैव चिकित्सा उपकरण के लिए कई नई कोटिंग शामिल किये गये हैं जैसे रोगाणुरोधी कोटिंग्स कई चिकित्सा उपकरणों में संवेदनशील शारीरिक तरल पदार्थ, जैसे रक्त या मूत्र के साथ संपर्क में आते हैं बाहरी बैक्टीरिया के हस्तांतरण को रोकने के लिए चिकित्सा उपकरण पर रोगाणुरोधी कोटिंग्स की जाती है साथ-साथ स्वच्छता की आवश्यकता होती है।

अन्य नये अनुप्रयोग

उपग्रहों और लॉन्च वाहनों आदि को विशेष विशेषताओं के साथ कोटिंग्स की आवश्यकता होती है, जिसमें सौर प्रतिबिंब और चालकता शामिल हैं राजस्थान के एक शोधार्थी द्वारा अंतरिक्ष यानों में गैस टर्बाइन इंजन में इस्तेमाल के लिये विकसित नये थर्मल स्प्रे कोटिंग प्रौद्योगिकी ने नासा के एक वैज्ञानिक का ध्यान आकर्षित किया है।

चुंबकीय कोटिंग्स: चुंबकीय कोटिंग आपकी दीवारों, आपके खिलौनों और आपके फर्नीचर को चुंबकीय सतह में बदल देती है। जैसा कि सर्वविदित है, कई अलग-अलग प्रकार के चुंबकीय टेप भी हैं। हालाँकि, इन सभी रिकॉर्डिंग मीडिया में केवल एक का समावेश है पदार्थों पर चुंबकीय परत पॉलीइथिलीन टेरेथालिक जैसे कोटिंग्स का लेप किया जाता है एसिड (पीईटी) फिल्म, कागज या धातु सब्सट्रेट

आदि। बेहतर विश्वसनीयता के लिए चुम्बकत्व की शक्ति में परिवर्तन के लिए बाहरी तापमान और दबाव स्थिर होना चाहिए और चुम्बकीय कणों का बल बड़ा होना चाहिए चुंबकीय कणों का कण आकार एक समान होना चाहिए।

सॉल्वेंट-जनित कोटिंग्सः सॉल्वेंट जनित कोटिंग्स को या तो एयर-एटमाइज्ड या पारंपरिक वायुहीन स्प्रे के साथ लगाया जाता है, हालांकि ब्रश, रोलर या स्क्वीजी द्वारा भी लगाया जा सकता है।

कोटिंग का गुणवत्ता नियंत्रण

पहले धातु के गुणवत्ता परीक्षण के लिये केवल अल्ट्रासोनिक टेस्ट करते हैं यह पता करने के लिये की धातु में कहीं संझारन के कारण कोई दोष तो नहीं है यदि सतह में दोष पायी जाती है तो वेल्डिंग द्वारा रिपेयर किया जाता है और फिर कोटिंग किया जाता है। कोटिंग की मोटाई को डीएफटी कहा जाता है यह माइक्रोन में होता है कोटिंग की मोटाई माप फिनिशरों के लिए और तैयार घटकों को प्राप्त करने वाली कंपनियों के लिए एक चिंता का विषय है। दोषपूर्ण कोटिंग्स जंग को जन्म देती है। नतीजतन, उत्पाद देयता को कोटिंग्स के गुणवत्ता नियंत्रण की आवश्यकता होती है चुंबकीय प्रेरण विधि गैर-चुंबकीय सब्सट्रेट्स से अधिक फेरस सब्सट्रेट्स और चुंबकीय कोटिंग्स पर गैर-चुंबकीय कोटिंग्स को मापती है। कोटिंग मोटाई की माप भंवर धारा विधि गैर-लौह प्रवाहकीय सब्सट्रेट पर गैर-प्रवाहकीय कोटिंग्स, गैर-प्रवाहकीय सब्सट्रेट पर गैर-लौह प्रवाहकीय कोटिंग और अलौह धातुओं पर कुछ गैर-लौह धातु कोटिंग्स को मापती है। यह चुंबकीय प्रेरण विधि के समान है और यहां तक कि एक ही जांच डिजाइन के कई उपयोग कर सकते हैं। एड़ी-करंट विधि के लाभ भी चुंबकीय प्रेरण के समान ही हैं, जिसमें कम लागत, संचालन में आसानी, सटीकता और पुनरावृत्ति और डिजिटल डिस्प्ले के साथ तात्कालिक माप शामिल हैं। भंवर धारा माप कोटिंग की मोटाई की जाँच का करता है जिसमें एक कॉइल भी होता है। यह जाँच/कुंडली एक उच्च आवृत्ति द्वारा एक वैकल्पिक उच्च आवृत्ति क्षेत्र उत्पन्न करने के लिए संचालित करती है। किसी बन्द कुण्डली में होकर गुजरने वाली चुम्बकीय बल रेखाओं की संख्या में परिवर्तन से उसमें प्रेरित धारा उत्पन्न होती है। प्रेरित धारायें केवल बन्द

परिपथों एवं बंद कुण्डलियों में ही उत्पन्न नहीं होती, बल्कि चुम्बकीय क्षेत्र में घूमते हुये ठोस चालकों में भी उत्पन्न होती है। ठोस चालकों पर बननेवाली प्रेरित धारायें आकार में पानी के पृष्ठ पर बनने वाले भँवर की तरह होती है, इसलिये इन्हें भँवर धारायें कहा जाता है। जब इस क्षेत्र को एक धातु कंडक्टर के पास लाया जाता है, उस प्रवाहकीय सामग्री में एड़ी धाराएं उत्पन्न होती हैं, जिसके परिणाम स्वरूप जाँच का तार के प्रतिबाधा परिवर्तन होता है। जाँच का तार और प्रवाहकीय सब्सट्रेट सामग्री के बीच की दूरी प्रतिबाधा परिवर्तन की मात्रा निर्धारित करती है। भंवर धारा परीक्षण कुंडल की ज्यामिति, चुम्बकीय भेद्यता, सामग्री की विद्युत चालकता, तापमान, क्रिस्टल की संरचना, सापेक्ष पारगम्यता निकटता, प्रवेश की गहराई पर निर्भर करती है। इसलिए एड़ी की धारा अर्ध धातु और इन्सुलेटर में प्रवाहित नहीं होती है। इस कारण से प्रबलित कंक्रीट (दीवार) की कोटिंग की मोटाई एडी धारा द्वारा गणना नहीं की जाती है क्योंकि यह इन्सुलेटर पर कोटिंग है, इस पद्धति द्वारा केवल विद्युत प्रवाहकीय सामग्री पर कोटिंग की गणना की जाती है। विद्युत प्रवाहकीय सामग्री पर गैर विद्युत प्रवाहकीय कोटिंग और प्रवाहकीय सामग्री पर प्रवाहकीय कोटिंग का परीक्षण किया जा रहा है। जब धातु पर कोटिंग किया जाता है और यदि आप कागज या पॉलिथीन बैग की मोटाई जानना चाहते हैं, तो बस उस टुकड़े को काट दें और ब्लॉक पर शून्य सेट करें

जो प्रवाहकीय है और संदर्भ टुकड़े (परीक्षण कागज) को धातु पर रखें जो उससे मेल खाता हो, तो आपको कागज या पॉलिथीन बैग के टुकड़े की सही मोटाई माइक्रोन में मिलेगी। जहाँ कम विद्युत प्रवाहकीय धातु को उच्च प्रवाहकीय धातु पर रखा जाता है, चालकता लोकी की ओर प्रवेश की गहराई और कुंडल भिन्नता घेरने से परत की मोटाई प्राप्त होती है। प्रबलित कंक्रीट (दीवार) की कोटिंग की मोटाई अल्ट्रासोनिक विधि द्वारा गणना की जाती है। अतः एक कोटिंग इंजीनियर के लिए धातु, यांत्रिक, विद्युत, इलेक्ट्रॉनिक का ज्ञान आवश्यक है।

रोजगार

सर्फेस कोटिंग इंजीनियर बनकर आप निर्माण, परिष्करण प्रौद्योगिकी, उत्पादकता में, गुणवत्ता, सुरक्षा और उत्पादों को जंगरोधी बनाने में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी प्रक्रिया में बड़े पैमाने पर विनिर्माण संयंत्र जैसे ऑटोमोबाइल, ऑटोमोटिव इंडस्ट्री, शिप बिल्डिंग इंडस्ट्री सतह परिष्करण उद्योग, साइकिल, और कई अन्य उद्योग कोटिंग इंजीनियर/सरफेस टेक्नॉलॉजी इनिशिएटिव के माध्यम से रोजगार पा सकते हैं कई उद्योगों के लिए टूलींग, जिसमें शीट मेटल, कोल्ड फोर्जिंग, एल्युमीनियम डाई कास्टिंग, पाउडर मेटल, ग्लास, टेक्सटाइल, वायर, और कई अन्य रिफाइनरी, जैव चिकित्सा, विद्युत संयंत्र, रासायनिक प्रसंस्करण संयंत्र, सीवेज और जल उपचार टैंक, मांस पैकिंग क्षेत्र, टेनरियों और डेयरियां, हैंडलिंग कमरे, बैटरी और साथ ही साथ खाद्य प्रसंस्करण संयंत्र, आदि उद्योग में यंत्रों में धातु की कोटिंग किया जाता है। सभी उद्योग में डिग्री धारक कोटिंग इंजीनियर रोजगार पा सकते हैं ।

मुख्य विषय

बीटेक सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी प्रक्रिया में अकार्बनिक रसायन विज्ञान ऑर्गेनिक केमिस्ट्री

एप्लाइड गणित एप्लाइड फिजिक्स- इंजीनियरिंग ग्राफिक्स, भौतिकी, कार्बनिक रसायन, विश्लेषणात्मक रसायन विज्ञान सामग्री और ऊर्जा संतुलन गणना, एप्लाइड गणित एप्लाइड फिजिक्स कम्प्यूटर के इंजीनियरिंग, संचार कौशल, सर्फेस कोटिंग और पॉलिमर टेक्नॉलॉजी दोनों छात्रों के लिए आम माना जाता है पॉलिमर और पेंट्स इंजीनियरिंग यांत्रिकी सामग्री इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रॉनिक्स इंजीनियरिंग, भौतिक, पॉलिमर विज्ञान और प्रौद्योगिकी, सामग्री प्रौद्योगिकी इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रॉनिक्स इंजीनियरिंग सामग्री और पॉलिमर-पॉलिमर थर्मोसेट पॉलिमर, कलर फिजिक्स और कलर हार्मोनी विश्लेषण और संश्लेषण रेजिन की विशेषता और पॉलिमर- रंग भौतिकी केमिकल इंजीनियरिंग ऑपरेशन रासायनिक प्रतिक्रिया इंजीनियरिंग और इंस्ट्रूमेंटेशन पॉलिमर के लिए वर्णक और योजक पेंट्स टेक्नॉलॉजी - संरचना इंजीनियरिंग, केमिकल इंजीनियरिंग पेंट्स की प्रोसेसिंग, परियोजना अर्थशास्त्र, औद्योगिक मनोविज्ञान और मानव संसाधन प्रबंध, संक्षारण सुरक्षा प्रिंटिंग स्याही की तकनीक, पॉलिमर का मूल्यांकन और परीक्षण, विद्युत इन्सुलेशन कोटिंग्स, पेंट्सका प्रसंस्करण, पेंट्स का विश्लेषण और परीक्षण, औद्योगिक प्रबंधन इन-प्लांट प्रशिक्षणए डिजाइन और प्रयोगों का विश्लेषण छात्रों के लिए है।

योग्यता

सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी में दिलचस्पी रखने वाले स्टूडेंट चार वर्षीय बीटेक यी बीई कोर्स में दाखिला ले सकते हैं। सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी में चार वर्षीय बी.टेक कोर्स हेतु 10+2 विज्ञान में गणित, भौतिकी एवं रसायन सहित कुल मिलाकर 50 प्रतिशत अंकों से उत्तीर्ण होना चाहिए। आईआईटी जैसे प्रसिद्ध संस्थानों में भी एंट्रेंस एग्जाम के मदद से इस कोर्स में दाखिला लिया जा सकता है। इस क्षेत्र में एमटेक की भी डिग्री हासिल की जा सकती है । सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी, प्लास्टिक मोल्ड टेक्नॉलॉजी या पॉलिमर टेक्नॉलॉजी के डिप्लोमा वाले उम्मीदवार भी पार्श्व प्रवेश के माध्यम से इस कोर्स में आवेदन करने के लिए पात्र हैं।

कोर्स

- सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी में डिप्लोमा
- बीटेक- सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी
- बीटेक- सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी
- बीटेक- केमिकल और इलेक्ट्रोकेमिकल इंजीनियरिंग
- बीटेक इलेक्ट्रोकेमिकल इंजीनियरिंग
- एमएससी (सतही कोटिंग प्रौद्योगिकी)
- एमएससी टेक/एम टेक सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी
- सतही कोटिंग प्रौद्योगिकी में पीएचडी /डॉक्ट्रोरल डिग्री

अवसर

कोटिंग इंजीनियरिंग की शाखा में बीटेक करने के बाद एक स्नातक को विभिन्न पदों पर सरकारी क्षेत्र एवं निजी कंपनियों में नौकरी मिलती है। अवसरों के क्षेत्र में भारत में सबसे अधिक संभावना पेट्रोकेमिकल उद्योग, इसरो (भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन), डीआरडीओ (रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन), आदि संगठनों में हैं वहीं सरकारी और निजी कंपनी में कास्टिंग और फोर्जिंग उद्योग, निर्माण उपकरण उद्योग (दबाव पोत/वाल्व आदि), निर्माण उद्योग (वेल्डिंग एवं एनडीटी परीक्षण) तेल और गैस उद्योग, जैव प्रौद्योगिकी उद्योग -पेट्रोलियम और रिफाइनरी

उद्योग, विमान उद्योग, शिपिंग उद्योग, ऑटोमोबाइल उद्योग आदि में कोटिंग इंजीनियर की भारी मांग है। एक कोटिंग इंजीनियर को टैंक, नलिकाएं के डिजाइन, निर्माण तथा गुणवत्ता नियंत्रण, मानकों के अनुसार एएनएसआई, एडब्ल्यूएस, एपीआई, एएसआईसी, राष्ट्रीय कोड आईएसआई आदि का व्यापक ज्ञान होना बहुत जरूरी है।

वेतन

सर्फेस कोटिंग टेक्नॉलॉजी में ग्रेजुएट की डिग्री रखने वाले स्टूडेंट्स को शुरुआती दौर में 50-60 हजार रुपये प्रति माह वेतन मिलने लगती है। यदि आपके पास डॉक्ट्रोरल डिग्री है, तो सैलॅरी 60-80 हजार रुपये शुरुआती महीनों में हो सकती है। इंजीनियर के लिए भारत के साथ-साथ विदेश में भी जॉब के अवसर तेजी से बढ़ रहे हैं। इनके लिए मुख्यत रोजगार के अवसर विमानन, रक्षा, पेट्रोकेमिकल, मेडिकल व फार्मास्युटिकल कंपनी, एग्रीकल्चर सेक्टर, प्राइवेट और सरकारी रिसर्च और डेवलपमेंट सेंटर में होते हैं।

मुख्य संस्थान

- डेक्कन एजुकेशन सोसायटी महाराष्ट्र स्टेट बोर्ड ऑफ टेक्निकल एजुकेशन, मुंबई
- केन्द्रीय विद्युत रासायनिक अनुसंधान संस्थान, कॉलेज रोड, कराईकुडी, तमिलनाडु
- इंस्टीट्यूट ऑफ केमिकल टेक्नॉलॉजी, मुंबई
- यू डीसीटी, जलगाँव
- लक्ष्मीनारायण इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी, नागपुर
- सरदार पटेल सेंटर फॉर साइंस एंड टेक्नॉलॉजी, वल्लभ विद्यानगर, गुजरात
- आई.एस.टी.ए.आर. कॉलेज, आनंद, गुजरात
- आईआईटी, रूड़की, कानपुर एवं मुंबई
- बीआईटी, सिंदरी, धनबाद
- एच.बी.टी.आई कानपुर, उ.प्र.
- एनआईटी, रायपुर, छ.ग.
- भारतीय धातु संस्थान, कोलकाता

goswamisanjay80@yahoo.in

जब दिखेंगे हैली धूमकेतु के अवशेष

इरफान ह्यूमन

डॉ. इरफान ह्यूमन विगत पच्चीस वर्षों से 'साइंस न्यूज एण्ड व्यूज़' मासिक विज्ञान पत्रिका का संपादन व प्रकाशन कर रहे हैं। आप विज्ञान लोकप्रियकरण कार्यक्रमों के माध्यम से देशभर में वैज्ञानिक जागरुकता के लिए प्रयासरत हैं। आपके एक हजार से अधिक लेख प्रकाशित हुए हैं, आकाशवाणी से अनेक विज्ञानवार्ताओं का प्रसारण हुआ है, विज्ञान धारावाहिक लेखन तथा विज्ञान डाक्यूमेंट्री फिल्मों के निर्माण में आपका बड़ा योगदान है। मुंबई में साइंस फिल्म फेस्टिवल आपकी फिल्में प्रदर्शित हुई हैं। विज्ञान लेखन तथा विज्ञान लोकप्रियकरण के लिए आपको कई सम्मान प्राप्त हैं तथा कई वैज्ञानिक संस्थाओं के मानद हैं। वर्तमान में आप शाहजहाँपुर उ.प्र. में निवासरत हैं।

इस माह 6 व 7 मई को एटा एक्वारिड्स उल्का वर्षा (Eta Aquarids Meteor Shower) की घटना घटित होगी। एटा एक्वरिड्स एक औसत से ऊपर की उल्का वर्षा है, जो अपने चरम पर 60 मीटर प्रति घंटे तक का उल्कापात करने में सक्षम है। इस खगोलीय घटना की अधिकांश गतिविधि रात्रि आकाश के दक्षिणी गोलार्ध (Southern hemisphere) में देखी जाती है। उत्तरी गोलार्ध में इनकी दर प्रति घंटा लगभग 30 उल्का तक पहुँच सकती है। यह उल्का वर्षा हैली धूमकेतु (Halley comet) द्वारा छोड़े गए धूल कणों द्वारा निर्मित है, जो प्राचीन काल से जाना और देखा जाता रहा है। यह उल्का वर्षा 19 अप्रैल से 28 मई तक प्रतिवर्ष चलती है। लेकिन इस साल 6 मई की रात से शुरू होकर 7 मई की सुबह तक अपने चरम पर होगी, तब आकाश में टूटते तारों का एक अच्छा दृश्य प्रकट होगा। इस उल्का वर्षा का सर्वश्रेष्ठ दृश्य आधी रात के बाद किसी अंधेरे स्थान से अधिक स्पष्टता से दिखाई देगा। हैली की उल्काएं नक्षत्र कुंभ राशि (Aquarius constellation) से विकरित होती प्रतीत होंगी, लेकिन ये रात्रि आकाश में कहीं भी दिखाई दे सकती हैं।

18 मई को नील चन्द्र यानी ब्लू मून (Blue moon) की घटना घटित होगी। तब चंद्रमा सूर्य की तरह पृथ्वी के विपरीत दिशा में स्थित होगा और सूर्य मुख पूरी तरह से प्रकाशमान होगा। यह चरण 21:11 यूटीसी (Universal Time Coordinated) पर होगा। इस विशेष पूर्णिमा को प्रारंभिक अमेरिकी जनजातियों द्वारा पूर्ण पुष्प चंद्रमा के रूप में जाना जाता था क्योंकि यह वर्ष का वह समय होता था जब बसंत में फूल बहुतायत में दिखाई देते थे। इस चंद्रमा को विश्व के कई हिस्सों में पूर्ण मकई रोपण चंद्रमा और दुग्ध चंद्रमा (Milk moon) के रूप में भी जाना जाता है। चूंकि इस बार यह इस ऋतु में चार पूर्ण चंद्रमाओं में से तीसरा है, इसलिए इसे नील चन्द्र के रूप में जाना गया है। यह दुर्लभ कैलेंडर घटना केवल कुछ वर्षों में एक बार घटित होती है, जो नील चन्द्र जैसे शब्द को जन्म देती है। जब हर 29:53 दिनों में पूर्ण चंद्रमा होते हैं तो आमतौर पर वर्ष के प्रत्येक ऋतु में केवल तीन पूर्ण चंद्रमा होते हैं, लेकिन कभी-कभी एक ऋतु में चार पूर्ण चंद्रमा होते हैं। ऐसे अतिरिक्त पूर्णिमा के चन्द्रमा को ऋतु का नील चन्द्र के रूप में जाना जाता है। शब्द नील चन्द्र (ब्लू मून) का संबंध चंद्रमा के नीले रंग से नहीं है। ब्लू मून लाल, नारंगी या पीले या सफेद रंग का हो सकता है।

नील चन्द्र या ब्लू मून पूर्णिमा के दिन घटित होने वाली एक घटना है। या तो एक ऋतु की चार पूर्णिमाओं में से तीसरी या फिर कलेंडर के अनुसार एक महीने की दूसरी पूर्णिमा की रात को प्रकट होने वाला चंद्रमा ब्लू मून कहलाता है अर्थात यदि कलेंडर में एक महीने में दो पूर्णिमाएँ हों तो दूसरी पूर्णिमा के चंद्रमा को ब्लू मून कहते हैं। वास्तव में ब्लू मून की पूर्णिमा को परंपरागत रूप से अतिरिक्त पूर्णिमा (The extra full moon) कहा जाता है, जब एक वर्ष में आमतौर पर 12 की बजाय 13 पूर्णिमाएँ होती हैं। ब्लू मून की घटना प्रत्येक दो या तीन साल में, मेटोनिक चक्र (Metonic cycle) के हर 19 सालों में 7 बार होती है अर्थात नील चन्द्र औसतन हर 2.7 साल में एक बार होता हैं।

यदि इस घटना की तह तक जाएं तो पाएंगे कि एक चंद्रमास (Lunar month) की अवधि 29.53 दिन होती है। एक वर्ष में लगभग 365.24 दिन होते हैं। 365.24 दिनों को 29.53 दिन से

विभाजित करने पर एक वर्ष में लगभग 12.37 चंद्रमास प्राप्त होते हैं। व्यापक रूप से इस्तेमाल किए जाने वाले ग्रेगोरीयन कैलेंडर में, एक वर्ष में 12 महीने और आम तौर पर हर महीने एक पूर्णिमा होती है। अतः प्रत्येक कैलेंडर वर्ष में 12 पूर्ण चंद्रमासों के अतिरिक्त भी लगभग 11 दिन अधिक होते हैं। हर वर्ष इन अतिरिक्त 11 दिनों को जमा करने पर, हर दो या तीन वर्षों में एक अतिरिक्त पूर्णिमा होती है। अतिरिक्त पूर्णिमा, अनिवार्य रूप से चार ऋतुओं में से एक में होती है, उस ऋतु में सामान्य रूप से तीन के बजाय चार पूर्णिमाएँ होती हैं। इस तरह एक नील चन्द्र की प्राप्ति होती है। पिछली बार यह घटना 21 मई, 2016 को घटित हुई थी। यदि इस बार आप इस खगोलीय घटना को देखने से चूक गये तो अगली बार आपको इसे देखने के लिए 22 अगस्त, 2021 का इंतेज़ार करना पड़ेगा।

माहकी खोज:

10 मई, 1752 को बेंजामिन फ्रैंकलिन ने पहली बार अपनी बिजली की छड़ या फ्रेंकलिन छड़ अर्थात तड़ित चालक (Lighting Road) का परीक्षण किया था। उन्होंने बिजली की छड़ के साथ बाईफोकल्स, लोहे की भट्टी का चूल्हा फ्रैंकलिन स्टोव, एक गाड़ी के ओडोमीटर और ग्लास आर्मोनिका आदि का आविष्कार भी किया। बेंजामिन फ्रैंकलिन एक प्रसिद्ध लेखक और मुद्रक, व्यंग्यकार, राजनीतिक विचारक, राजनीतिज्ञ, वैज्ञानिक, आविष्कारक, नागरिक कार्यकर्ता और राजनयिक थे। एक वैज्ञानिक के रूप में, बिजली के सम्बन्ध में अपनी खोजों और सिद्धांतों के लिए वे प्रबोधन और भौतिक विज्ञान के इतिहास में एक प्रमुख शख्सियत के रूप मे अंकित हैं। बेंजामिन फ्रेंकलिन द्वारा आविष्कृत लाइटिंग कंडक्टर से मकानों पर बिजली गिरने से होने वाले नुकसान से बचा जा सकता है। तड़ित चालक मे धातु की बनी एक छड़ होती है और इस छड़ का ऊपरी नुकीला सिरा मकान की छत के ऊपर रहता हैं जबकि दूसरा सिरा जमीन में गाड़ दिया जाता है। जब तड़ित बादल मकान के ऊपर से जाते है, तब तड़ित विद्युत मकान से ना टकराकर उस छड़ के द्वारा ज़मीन में चली जाती है। बेंजामिन फ्रैंकलिन के विषय में चर्चित है कि उन्होंने हमेशा मानवहित में कार्य करने की सोची और कभी भी अपने आविष्कारों का पेटेंट नहीं करवाया क्योंकि वह चाहते थे कि उनकी खोजों का आम लोग निःशुल्क इस्तेमाल कर सकें।

अंतरिक्ष युद्ध की आहट

स्टार वॉर्स जॉर्ज लूकस द्वारा कल्पित एक महाकाव्यात्मक अंतरिक्ष ओपेरा का फ्रैन्चाइज़ है, जिस पर बनी पहली फिल्म मूलतः 25 मई, 1977 को 20जी सेंचुरी फॉक्स के सौजन्य से रिलीज़ हुई और विश्वव्यापी पॉप संस्कृति की अदभुत घटना बन गई। स्टार वॉर्स की रिलीज़ से इस फ़िल्म की शृंखला की शुरुआत हुई। दो उत्तर भागों ''द एम्पायर स्ट्राइकस बैक'' 21 मई, 1980 को रिलीज़ हुई और ''रिटर्न ऑफ द जेडी'' 25 मई, 1983 को रिलीज हुई। वर्ष 1997 में, स्टार वॉर्स के रिलीज़ होने की 20वीं वर्षगांठ पर उसके तदनुरूप लुकास ने तीनों फिल्मों के विशेष संस्करण सिनेमाघरों के लिए रिलीज किए गये। इन प्रसारणों में मूल फिल्मों में अनेक फेरबदल पेश किए गए, मुख्यरूप से स्पेशल एफ़ेक्ट के कारण, जिसे ऐसे दृश्य पैदा किए जो मूल फिल्मों के निर्माण के समय संभव नहीं था। इन्हीं यादों को ताज़ा करने के लिए 4 मई को स्टार वार्स दिवस (Star Wars Day) मनाया जाता है। यदि विज्ञान

कथाओं की बात की जाए तो एक जाना पहचाना नाम है स्टार वार्स, जिस पर आधारित उपन्यास इस विषय पर बनी फिल्म के रिलीज़ से काफ़ी पहले ही लिखी जा चुका था। वर्ष 1976 में औपन्यासिक रूपांतरण के साथ स्टार वॉर्स एलेन डीन फॉस्टर लिखित ''घोस्ट और लुकास'' को जिसके लिए प्रशंसित किया गया, फॉस्टर के वर्ष 1978 में प्रकाशित उपन्यास ''स्प्लिंटर ऑफ द माइंड्स आई एक्स्पैंडेड यूनिवर्स'' की रिलीज़ होने वाली पहली कृति थी। मार्वेल कॉमिक्स ने वर्ष 1977 से 1986 तक स्टार वॉर्स कॉमिक बुक शृंखला और रूपांतरण प्रकाशित किए। स्टार वार्स की आहट उस दिन से महसूस की गई जब चीन ने अपनी तुंगफुंग मिसाइल से अपने ही एक मौसम उपग्रह को मार गिराया था। यह उपग्रह उस समय पृथ्वी 860 किलोमीटर की दूरी पर था। अमेरिका ने चीन के इस परीक्षण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा कि इससे अंतरिक्ष में हथियारों की होड़ फिर शुरू हो सकती है।

इस दिशा में चीन ने वर्ष 2007 में उपग्रह रोधी (एसैट) परीक्षण कर इस दिशा में अपने क़दम और मज़बूत किये हैं। वर्तमान में उपग्रहों को जाम करने की क्षमता चीन के पास है और अब वह पूर्ण स्पेक्ट्रम क्षमता विकसित करने की ओर बढ़ रहा है। टोही विमानों, संचार उपग्रहों को नुकसान पहुंचाने पर भी उसका ध्यान है। इस दिशा में चीन के लगातार प्रयास और उपग्रह प्रतिरोधी हथियारों के परीक्षण से स्वयं अमेरिका भी चिंतित है। अमेरिका ने भी 13 सितम्बर, 1985 को अपना अन्तिम उपग्रह भेदी परीक्षण किया था। इसके बाद इस पर इसलिए रोक लगा दी गई कि नष्ट होने वाले उपग्रह के टुकड़े दूसरे उपग्रहों को क्षति पहुंचा सकते हैं। हालांकि अमेरिका ने जंगी जहाज़ यूएसएस लेक एरी ने कुछ वर्ष पहले 'एसएम-3' प्रक्षेपास्त्र से स्काई लैब की तरह पृथ्वी की ओर आ रहे उसके जासूसी उपग्रह को तीन मिनट के अन्दर पृथ्वी से 133 मील ऊपर ध्वस्त कर दिया था। चीन ने 11 जनवरी, 2007 को अंतरिक्ष में मौजूद अपने मौसमी उपग्रह को इसी तरह प्रक्षेपास्त्र से निशाना बनाया था। इससे वह अमेरिका व तत्कालीन सोवियत संघ के बाद ऐसा कारनामा दिखाने वाला तीसरा देश हो गया। ज्ञात रहे कि रूस भी ऐसे प्रयोग करने में सक्षम है, तो क्या भला वह पीछे रह सकता है! ऐसे में यही लगता है कि सामूहिक विनाश के हथियारों को अंतरिक्ष में जाने की होड़ बढ़ने की ही संभावना अधिक है। अंतरिक्ष में इस तरह के प्रयोग से लगता है कि यह एक तरह की महत्वाकांक्षा है, जो जमीन, जल और आकाश से निकलकर अब अंतरिक्ष की ओर कदम बढ़ा रही है। इससे आंकलन किया जा रहा है कि कौन कितनी दूर मार कर सकता है। माना तो यह भी जाता है कि किसी समय तो अंतरिक्ष युद्ध की तैयारी भी हो गई थी। लेकिन सोवियत संघ के विभाजन के बाद यह योजना अपने आप ठण्डी पड़ गई। अब चीन ने संचार उपग्रहों को ठप करने की क्षमता हासिल करके भविष्य के सभी युद्धों की प्रमुख प्रौद्योगिकी को विकसित कर लिया है।

हमारे देश के पास भी उपग्रहों को मार गिराने की क्षमता है, लेकिन उसने जान-बूझकर इस दिशा में कदम नहीं बढ़ाया है, क्योंकि वह अंतरिक्ष के शान्तिपूर्ण उपयोग के लिए संयुक्त राष्ट्र के प्रस्ताव पर हस्ताक्षर कर चुका है। जो भी हो, स्टार वार्स फिलहाल तो एक कहानी है, लेकिन आज विश्व के बिगड़ते हालात देखकर लगता है कि इसे हक़ीकत बनते देर नहीं लगेगी, इस दिशा में सभी देशों को धैर्य और समझदारी से काम लेना होगा।

ना खाना भी बेहतर है

खुद को पसंदीदा खाना खाने से रोकना बड़ा कठिन काम होता है। हालांकि सेहत के प्रति समझदार दिखने वाले लोग अक्सर अपना मन मारते दिखते हैं। वैसे कभी-कभी खाना ना खाना भी हमारी सेहत के लिए बेहतर होता है, इस बात को हमारे पूर्वज अच्छी तरह समझते थे। धार्मिक एवं आध्यात्मिक साधना के रूप में प्रागैतिहासिक काल से ही उपवास का प्रचलन है और हिन्दु हो या मुस्लिम सभी धर्मों में उपवास और रोज़ा को सेहत के लिए अच्छा बताया गया है। कुछ या सभी भोजन, पेय या दोनो के लिये बिना कुछ अवधि तक रहना उपवास (Fasting) कहलाता है। उपवास पूर्ण या आंशिक हो सकता है। यह एक दिन की अवधि से लेकर एक माह तक का हो सकता है।

6 मई को अन्तर्राष्ट्रीय आहार रहित दिवस (International no diet day) मनाया जाता है, जिसकी शुरूआत 90 के दशक में एक ब्रिटिश महिला मैरी इवांस ने की थीं। पहला आहार रहित दिवस यूके में वर्ष 1992 में मनाया गया था इसके बाद यह पूरे विश्व में मनाया जाने लगा। देखा गया है कि एक बार भोजन ग्रहण करने पर कुछ घंटों तक जो शरीर को खाए हुए आहार से शक्ति मिलती रहती है, किंतु उसके पश्चात् शरीर में संचित आहार के अवयवों-प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और वसा का शरीर उपयोग करने लगता है। वसा और कार्बोहाइड्रेट परिश्रम करने की शक्ति उत्पन्न करते हैं। प्रोटीन का काम शरीर के टूटे-फूटे भागों का पुनर्निर्माण करना है। किंतु जब उपवास लंबा या अधिक काल तक होता है तो शक्ति उत्पादन के लिए शरीर प्रोटीन का भी उपयोग करता है। इस प्रकार प्रोटीन ऊतक निर्माण (टिशू फॉर्मेशन) और शक्ति-उत्पादन दोनों काम करता है।

मानव शरीर में कार्बोहाइड्रेट दो रूपों में वर्तमान रहता है- ग्लूकोस, जो रक्त में प्रवाहित होता रहता है और गलाइकोजेन, जो पेशियों और यकृत में संचित रहता है। साधारणतया कार्बोहाइड्रेट शरीर प्रतिदिन के भोजन से मिलता है। उपवास की अवस्था में जब रक्त का ग्लूकोस खर्च हो जाता है तब संचित ग्लाइकोजेन ग्लूकोस में परिणत होकर रक्त में जाता रहता है। उपवास की अवस्था में यह संचित कार्बोहाइड्रेट दो चार दिनों में ही समाप्त हो जाता है, तब कार्बोहाइड्रेट का काम वसा को करना पड़ता है और साथ ही प्रोटीन को भी इस कार्य में सहायता करनी पड़ती है। मानव शरीर में वसा विशेष मात्रा में त्वचा के नीचे तथा कलाओं में संचित रहती है। स्थूल शरीर में वसा की अधिक मात्रा रहती है। शरीर को दैनिक कार्यों में और उष्मा के लिए कार्बोहाइड्रेट, वसा और प्रोटीन, तीनों पदार्थों की आवश्यकता होती है, जो उसको अपने आहार से प्राप्त होते हैं। आहार से उपलब्ध वसा यकृत में जाती है और वहाँ पर रासायनिक प्रतिक्रियाओं में वसाम्ल और ऐसिटो-ऐसीटिक-अम्ल में परिवर्तित होकर रक्त में प्रवाहित होती है तथा शरीर को शक्ति और उष्मा प्रदान रकती है। उपवास की अवस्था में शरीर की संचित वसा का यकृत द्वारा इसी प्रकार उपयोग किया जाता है। यह संचित वसा कुछ सप्ताहों तक कार्बोहाइड्रेट का भी स्थान ग्रहण कर सकती है। अंतर केवल यह है कि जब शरीर को आहार से कार्बोहाइड्रेट मिलता रहता है तब ऐसिटो-ऐसीटिक-अम्ल यकृत द्वारा उतनी ही मात्रा में संचालित होता है जितनी की आवश्यकता शरीर को होती है। कार्बोहाइड्रेट की अनुपस्थिति में इस अम्ल का उत्पादन विशेष तथा अधिक होता है और उसका कुछ अंश मूत्र में आने लगता है। इस अंश को कीटोन कहते हैं कीटोन का मूत्र में पाया जाना शरीर में कार्बोहाइड्रेट की कमी का चिह्न है और उसका अर्थ यह होता है कि कार्बोहाइड्रेट का कार्य अब संचित वसा को करना पड़ रहा है। यह उपवास की प्रारंभावस्था में होता है।

विज्ञान कहता है कि अच्छी सेहत और बेहतर पाचनतंत्र के लिए उपवास या रोज़ा ज़रूरी है। सही तरीके से और सीमित संख्या में उपवास करना आपकी सेहत के लिए फायदेमंद होता है। डेली टेलीग्राफ की रिपोर्ट के मुताबिक इंसानों पर उपवास का सकारात्मक असर होता है। इंस्टीट्यूट लैबोरटी ऑफ न्यूरोसाइंस के प्रोफेसर के मुताबिक अगर आप कम कैलोरी का सेवन करेंगे तो इससे आपके दिमाग को मदद मिलेगी। उन्होंने बताया फास्ट बेशक फायदेमंद है लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि आप खाना ही छोड़ दें। शोधकर्ताओं ने एक अध्ययन में प्रमाणित किया है कि सप्ताह में दो दिन खाने से परहेज करेंगे तो आपकी उम्र में इजाफा होगा। नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एजिंग के शोधकर्ताओं ने अध्ययन में पाया है कि सप्ताह में दो दिन का उपवास लंबी उम्र पाने की चाबी है। इतना ही नहीं उपवास रखने से अल्जाइमर और पार्किंगसन जैसी दिमागी बीमारियों से भी बचा जा सकता है।

शोधकर्ताओं के मुताबिक जब शरीर सीमित मात्रा में कैलोरी लेता है तो दिमाग में मौजूद केमिकल मैसेंजर में इजाफा होता है। हालांकि यह बात पहले से प्रमाणित थी कि चूहों में कैलोरी की सीमित मात्रा उनकी जिंदगी को लंबा करती है। शोधकर्ताओं का मानना है कि चूहों की तरह ही इंसान पर भी इसका एक जैसा असर होगा।

शरीर के निजी अंगों के प्रति

जननांग स्वायत्तता (Genital Autonomy) को लेकर आज दुनिया के हर देश से समय-समय पर आवाज़े उठने लगी हैं। जननांग स्वायत्तता को विशेशतः पुरूष-स्त्री ख़तना (Circumcision/mutilation) से जोड़कर देखा जाता है। इस प्रथा के विरूद्ध जर्मनी द्वारा 7 मई, 2013 को एक अभियान प्रारम्भ किया गया था। इस तिथि को इसलिए चुना गया है क्योंकि 7 मई, 2012 को कोलोन (जर्मनी) के जिला न्यायालय ने वहां पहली बार न्याय के तहत घोषणा की गई कि पुरूष बच्चों का ख़तना किसी हमले के समान है। 7 मई को विश्व व्यापी जननांग स्वायत्तता दिवस

(World wide day of genital autonomy) मनाया जाता है।

पुरूषों का ख़तना उनके शिश्न (Penis) की अग्रत्वचा को पूरी तरह या आंशिक रूप से हटा देने की प्रक्रिया है। मानव शिश्न जैविक ऊतक के तीन स्तंभों से मिल कर बनता है। पृष्ठीय पक्ष (Dorsal side) पर दो कोर्पस कैवर्नोसा एक दूसरे के साथ-साथ तथा एक कोर्पस स्पोंजिओसम उदर पक्ष (Abdominal side) पर इन दोनों के बीच स्थित होता है। कोर्पस स्पोंजिओसम का वृहत और गोलाकार सिरा शिश्नमुंड में परिणित होता है जो अग्रत्वचा द्वारा सुरक्षित रहता है। अग्रत्वचा एक ढीली त्वचा की संरचना है। शिश्न के निचली ओर का वह क्षेत्र जहाँ से अग्रत्वचा जुड़ी रहती है अग्रत्वचा का बंध (फेरुनुलम) कहलाता है।

देखा जाए तो ख़तना एक प्राचीन प्रथा है जिसके प्रारंभिक चित्रण गुफा चित्रों और प्राचीन मिस्र की कब्रों में भी मिलते हैं। यहूदी संप्रदाय में पुरूषों का धार्मिक ख़तना ईश्वर का आदेश माना जाता है। यहूदी कानून के अनुसार खतना एक मित्ज़्वा असेह (mitzva aseh) है और यह यहूदी के रूप में जन्म लेने वाले पुरूषों और यहूदी धर्म में धर्मांतरित होने वाले उन पुरूषों के लिये अनिवार्य है। इसे केवल तभी टाला जा सकता है जब इससे बच्चे के जीवन या स्वास्थ्य पर कोई ख़तरा हो। सामान्यतः यह कार्य एक मोहेल (mohel) द्वारा जन्म के आठवें दिन ब्रित मिलाह (Brit milah) नामक एक आयोजन में किया जाता है, जिसका हिब्रू अर्थ ''खतने का रिवाज़'' है। मुस्लमानों में यह व्यापक रूप से प्रचलित है और अक्सर इसे सुन्नत या सुन्नाह (Sunnah) कहा जाता है। शिशुओं और किशोरों का ख़तना भारत सहित मुस्लिम देशों के अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमेरीका, ऑस्ट्रेलिया और कनाडा, दक्षिण अफ्रीका, न्यूजीलैण्ड के अंग्रेजी-भाषी क्षेत्रों और कम व्यापक रूप से यूनाइटेड किंगडम में भी अपनाया जाता है।

इस बात की व्याख्या करने वाले अनेक अनुमान हैं कि वर्ष 1900 के आस-पास संयुक्त राज्य अमेरीका में शिशुओं के ख़तने को क्यों स्वीकार किया गया। विशेषज्ञ मानते हैं कि बीमारियों के जीवाणु सिद्धांत ने मानव शरीर को अनेक ख़तरनाक जीवाणुओं के लिये वाहन के रूप में चित्रित किया गया, जिससे लोग जीवाणुओं के
प्रति भयभीत (Germ phobic) और धूल-मिट्टी तथा शरीर से निकलने वाले पदार्थों के प्रति आशंकित हो गये थे। विशेषज्ञों का कहना है कि ख़तना किए गए पुरुषों में संक्रमण का जोखिम कम होता है क्योंकि लिंग की आगे की त्वचा के बिना कीटाणुओं के पनपने के लिए नमी का वातावरण नहीं मिल पाता।

संयुक्त राष्ट्र के विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) एचआईवी/एड्स पर जॉइन्ट यूनाईटेड नेशन्स प्रोग्राम और सेंटर्स फॉर डिसीज़ कण्ट्रोल एण्ड प्रीवेंशन का मत हैं कि प्रमाण इस बात की ओर संकेत करते हैं कि पुरूषों में ख़तना करना शिश्न-योनि यौन संबंध के दौरान पुरूषों द्वारा एचआईवी अभिग्रहण के ख़तरे को लक्षणीय रूप से कम कर देता है, लेकिन यह भी कहते हैं कि ख़तना केवल आंशिक सुरक्षा प्रदान करता है ना कि इसे एचआईवी के प्रसार को रोकने के लिये प्रयुक्त अन्य अवरोधों के विकल्प के रूप में समझना चाहिये।

आज ख़तने के लिए सर्जन का सहरा लिया जा रहा है, क्योंकि नीम-हकीमों से ख़तना करवाना ख़तरे से खाली नहीं होता। भारत में ख़तना के समय दावत आदि आयोजित करने का रिवाज़ अब लगभग समाप्त हो गया है, लेकिन अन्य कई देशों में ख़तना प्रथा को समाहरोपूर्वक मनाया जाता है। दक्षिण अफ्रीका में किशोरों की देखभाल करने वालों को अमाखानकाथा कहा जाता है, जबकि पारंपरिक सर्जन को इंगसिबी कहते हैं। ये लोग अपने गीत और नृत्य के माध्यम से नए लड़कों को अपनी परंपरा बरकरार रखने और उसका सम्मान करने का संदेश देते हैं। असुरक्षित ढंग से ख़तना करने के कारण कई किशोरों की मौत हो चुकी है, इन मौतों के बाद उन पारंपरिक सर्जनों पर शिकंजा कसने की मांग उठ रही है जो ये सर्जरी करते हैं, क्योंकि अधकचरे ऑपरेशनों
के चलते सैकड़ों लोग अस्पतालों में भर्ती हो चुके हैं।

आज पूरी दुनिया में महिलाओं के ख़तना पर विवाद है। सभ्य समाज में स्त्री जननांग स्वायत्तता की बात की जाए तो स्त्री ख़तना को विश्व में एक घिनौने सामाजिक/धार्मिक कृत के रूप में देखा जा रहा है। 8 मई, 2017 को सुप्रीम कोर्ट ने एक याचिका पर सुनवाई के दौरान केंद्र सरकार के चार मंत्रालयों से महिलाओं के ख़तना पर उनकी राय मांगी थी। महिलाओं के जननांग के ख़तना अर्थात अंगभंग (Female genital mutilation) की प्रथा एशिया और अफ्रीका के बहुत से देशों में व्याप्त है, ख़ासकर बोहरा समुदाय में।

ज्ञातव्य हो कि सुप्रीम कोर्ट द्वारा मंत्रालयों की राय मांगने से कुछ दिन पहले अमेरिका के डेट्रायट में एक डॉक्टर को एक महिला का ख़तना करने के आरोप में नौकरी से निकाल दिया गया था। आम तौर पर महिलाओं का ख़तना करते समय उन्हें बेहोश या प्रभावित इलाज के लिए सुन्न नहीं किया जाता और न ही कोई डॉक्टर निगरानी के लिए मौजूद होता है। डब्ल्यूएचओ के अनुसार अफ्रीका और एशिया के करीब 30 देशों में 20 करोड़ से अधिक लड़कियों का ख़तना हो चुका है।

भारतीय सुप्रीम कोर्ट ने इसे महिलाओं के लैंगिक आधार पर भेदभाव बताया है। अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों में इस पर कानूनन रोक भी है।

सूचना और दूरसंचार में

संचार का इतिहास प्रागैतिहासिक काल से आरम्भ होता है। संचार के अन्तर्गत तुच्छ विचार-विनिमय से लेकर शास्त्रार्थ एवं जनसंचार (Mass communication) सब आते हैं। कोई 200,000 वर्ष पूर्व मानव-वाणी के प्रादुर्भाव के साथ मानव संचार में एक क्रान्ति आयी थी। लगभग 30,000 वर्ष पूर्व प्रतीकों का विकास हुआ एवं लगभग 7000 ईसापूर्व लिपि और लेखन का विकास हुआ। इनकी तुलना में पिछली कुछ शताब्दियों में ही दूरसंचार के क्षेत्र में बहुत अधिक विकास हुआ है। 17 मई को विश्व दूरसंचार दिवस (World information society day) एवं विश्व सूचना समाज दिवस (World Information Society Day) मनाया जाता है। विश्व दूरसंचार दिवस 17 मई को मनाया जाता है। यह दिन 17 मई 1865 को

अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ की स्थापना की स्मृति में विश्व दूरसंचार दिवस के रूप में जाना जाता था। वर्ष 1973 में मैलेगा-टोर्रीमोलिनोन्स में एक सम्मेलन के दौरान इसे घोषित किया गया। इस दिन का मुख्य उद्देश्य इंटरनेट और नई प्रौद्योगिकियों द्वारा लाया गया सामाजिक परिवर्तनों की वैश्विक जागरूकता बढ़ाने के लिए है।

यह दिवस अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ (आईटीयू) की स्थापना और वर्ष 1865 में पहले अंतर्राष्ट्रीय टेलीग्राफ समझौते पर हस्ताक्षर होने की स्मृति में मनाया जाता है। इस दिन का मुख्य उद्देश्य इंटरनेट, टेलीफोन और टेलीविजन के द्वारा तकनीकी दूरियों को कम करना और आपसी संचार सम्पर्क को बढ़ाना भी है। आधुनिक युग में फोन, मोबाइल और इंटरनेट लोगों की प्रथम आवश्यकता बन गये हैं। इसके बिना जीवन की कल्पना करना बहुत ही मुश्किल हो चुका है। आज यह इंसान के व्यक्तिगत जीवन से लेकर व्यावसायिक जीवन में पूरी तक प्रवेश कर चुका है। पहले जहाँ किसी से संपर्क साधने के लिए लोगों को काफी मशक्कत करनी पड़ती थी, वहीं आज मोबाइल और इंटरनेट ने इसे बहुत ही आसान बना दिया है। व्यक्ति कुछ ही सेकेंड में बेहद असानी से दोस्तों, परिवार और सगे संबधियों से संपर्क साध सकता है। यह दूरसंचार की क्रांति है, जिसकी बदौलत भारत जैसे कुछ विकासशील देशों की गिनती भी विश्व के कुछ ऐसे देशों में होती है, जिनकी अर्थव्यवस्था तेजी से रफ्तार पकड़ रही है। 'विश्व दूरसंचार दिवस' मनाने की परंपरा 17 मई, 1865 में शुरू हुई थी, लेकिन आधुनिक समय में इसकी शुरुआत 1969 में हुई। तभी से पूरे विश्व में इसे हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। इसके साथ नवम्बर, 2006 में टर्की में आयोजित पूर्णाधिकारी कांफ्रेंस में यह भी निर्णय लिया गया था कि 'विश्व दूरसंचार' एवं 'सूचना' एवं 'सोसाइटी दिवस', तीनों को एक साथ मनाया जाए।

दूरसंचार के लोकप्रिय अर्थ में हमेशा बिजली के संकेत शामिल रहे हैं और आजकल लोगों ने डाक या दूरसंचार के किसी भी अन्य कच्चे तरीके को इसके अर्थ से बाहर रखा है। इसलिए, भारतीय दूरसंचार के इतिहास को टेलीग्राफ की शुरूआत के साथ प्रारंभ किया जा सकता है। भारत में डाक और दूरसंचार क्षेत्रों में एक धीमी और असहज शुरुआत हुई थी। 1850 में, पहली प्रायोगिक बिजली तार लाइन डायमंड हार्बर और कोलकाता के बीच शुरू की गई थी। 1851 में, इसे ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के लिए खोला गया था। डाक और टेलीग्राफ विभाग उस समय लोक निर्माण विभाग के एक छोटे कोने में था। उत्तर में कोलकाता (कलकत्ता) और पेशावर को आगरा सहित और मुंबई (बॉम्बे) को सिंदवा घाट्स के जरिए दक्षिण में चेन्नई, यहां तक कि ऊटकमंड और बंगलोर के साथ जोड़ने वाली 4000 मील (6400 किमी) की टेलीग्राफ लाइनों का निर्माण नवंबर 1853 में शुरू किया गया। भारत में टेलीग्राफ और टेलीफोन का बीड़ा उठाने वाले डॉ. विलियम शौनेस्सी लोक निर्माण विभाग में काम करते थे। वे इस पूरी अवधि के दौरान दूरसंचार के विकास की दिशा में काम करते रहे। 1854 में एक अलग विभाग खोला गया, जब टेलीग्राफ सुविधाओं को जनता के लिए खोला गया था।

पारिस्थितिक संतुलन की आवश्यकता

जैव-विविधता या जैविक-विविधता (bio-diversity) जीवों के बीच पायी जाने वाली विभिन्नता है जोकि प्रजातियों में, प्रजातियों के बीच और उनकी पारितंत्रों की विविधता को भी समाहित करती है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम यानी युएनईपी के अनुसार जैवविविधता विशिष्टतया अनुवांशिक, प्रजाति तथा पारिस्थितिकि तंत्र के विविधता का स्तर मापता है। जैव विविधता किसी जैविक तंत्र के स्वास्थ्य का सूचक है। जैव-विविधता शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम वाल्टर जी. रासन ने 1985 में किया था। अन्तर्राष्ट्रीय जैव विविधता दिवस (International day of biological diversity) 22 मई को मनाया जाता है। वर्ष 2010 को जैव विविधता का अंतर्राष्ट्रीय वर्ष, घोषित किया गया था। जैव-विविधता तीन प्रकार की हैं-आनुवंशिक विविधता, प्रजातीय विविधताय तथा पारितंत्र विविधता। प्रजातियों में पायी जाने वाली आनुवंशिक विभिन्नता को आनुवंशिक विविधता के नाम से जाना जाता है। प्रजातियों में पायी जाने वाली विभिन्नता को प्रजातीय विविधता के नाम से जाना जाता है। पारितंत्र विविधता पृथ्वी पर पायी जाने वाली पारितंत्रों में उस विभिन्नता को कहते हैं जिसमें प्रजातियों का निवास होता है। जैव-विविधता पारितंत्र को स्थिरता प्रदान कर पारिस्थितिक संतुलन को बरकरार रखती है। पौधे तथा जन्तु एक दूसरे से खाद्य शृंखला तथा खाद्य जाल द्वारा जुड़े होते हैं। एक प्रजाति की विलुप्ति दूसरे के जीवन को प्रभावित करती है। आज मानव की लालची प्रवृत्ति के चलते सम्पूर्ण हमारी जैवविविधता ख़तरे में पड़ गई है। संपूर्ण विश्व में पौधों की लगभग 60,000 प्रजातियाँ तथा जन्तुओं की 2,000 प्रजातियाँ विलुप्ति के कगार पर खड़ी हैं। यद्यपि इसमें से ज़्यादातर प्रजातियाँ पौधों की हैं पर इसमें कुछ प्रजातियाँ जन्तुओं की भी हैं। इनमें 343 मछलियाँ, 50 जलथलचारी, 170 सरीसृप, 1,355 अकेशरुकी, 1,037 पक्षियाँ तथा 497 स्तनपायी शामिल हैं। अतः पर्यावरण एवं पारिस्थितिक संतुलन, प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, सूखा, भू-स्खलन आदि से मुक्ति के लिये जैव-विविधता का संरक्षण आज समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

research.org@rediffmail.com

आज के डाटा युग की जरूरत है क्लाउड कम्प्यूटिंग तकनीक

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में 9 अप्रैल को आयोजित वर्कशॉप में सीएसई एंड आईटी ब्रांच के 50 स्टूडेंट्स को क्लाउड कम्प्यूटिंग और डाटा कम्युनिकेशन पर आधारित एक्सपोज़र प्रशिक्षण दिया गया। कार्यक्रम के अंतर्गत आईटी एवं कम्युनिकेशन फील्ड के एक्सपर्ट्स द्वारा स्टूडेंट्स को क्लाउड कम्प्यूटिंग एसेंन्शियल पर प्रशिक्षण दिया गया जिसमें स्टूडेंटस को क्लास रूम के साथ-साथ लैब ट्रेनिंग भी कराई गई। आरएनटीयू के सीवी रामन सेंटर फॉर साइंस कम्युनिकेशन और सीएसई एंड आईटी विभाग द्वारा आयोजित इस प्रशिक्षण सत्र में स्टूडेंट्स ने उत्साह पूर्वक भाग लेकर नई क्लाउड तकनीक से जुड़े भविष्य के सवालों पर एक्सपर्ट्स से सीधा और जीवंत संवाद किया। इस वर्कशॉप में बतौर एक्सपर्ट वक्ता मध्यप्रदेश बीएसएनएल के नेक्स्ट जेनरेशन नेटवर्क सेन्टर के डीजीएम बी.सी. खरे ने आरएनटीयू के कम्प्यूटर साइंस इंजिनीयरिंग और आईटी स्टूडेंट्स को क्लाउड कम्प्यूटिंग एसेंन्शियल और डाटा कम्युनिकेशन से सम्बद्ध पहलुओं पर विस्तार से जानकारी दी।

समापन कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में दूरसंचार आयोग,भारत सरकार के पूर्व सदस्य और एमटीएनएल के तत्कालीन सीएमडी एन.के.यादव, इसरो के पूर्व साइंटिस्ट जमुना प्रसाद और सीवी रामन विश्वविद्यालय खंडवा के कुलपति एवं शिक्षाविद प्रो. अमिताभ सक्सेना मौजूद थे। स्टूडेंटस से बातचीत करते हुए एन.के.यादव ने कहा कि जैसे आज आईओटी यानी इंटरनेट ऑफ थिंग्स की जगह हम इंटरनेट ऑफ एवरीथिंग की बात करते हैं उसी तरह भविष्य में क्लाउड का प्रयोग भी हर क्षेत्र में होगा। इसकी तकनीक कम दामों में बिना जगह की समस्या के अच्छा परिणाम देती हैं। मेमोरी स्टोरेज का पक्ष आज के समय में तकनीकी संचार के लिए बहुत जरूरी है। जिसके लिए क्लाउड कम्प्यूटिंग एक बेहतर विकल्प है। क्लाउड कम्प्यूटिंग वर्तमान समय की जरूरत है क्योंकि जरूरत के डेटा का विस्तार बहुत ज्यादा होने से विस्तृत डेटा सेव करने की अपनी सीमाएं हैं जिसके लिए क्लाउड एक बेहतर विकल्प है। इसरो के पूर्व वैज्ञानिक जे.प्रसाद ने डेटा कम्युनिकेशन और उपग्रहों की भूमिका पर अपने विचार साक्षा किए और भविष्य में क्लाउड तकनीक और डाटा एवं सेटेलाइट कम्यूनिकेशन के संबंधों पर विस्तार से बात की। आरएनटीयू के सीवी रामन सेंटर फॉर साइंस कम्युनिकेशन और सीएसई एंड आईटी विभाग द्वारा आयोजित इस वाईब्रेंट शैली के वर्कशॉप की सभी ने सराहना की। इस अवसर पर सीआईईएस के सीईओ नितिन वत्स, वर्कशॉप के संयोजक एवं सीवीआरसीएससी के डायरेक्टर प्रो. राग तेलंग, डॉ.प्रतिमा गौतम, डीन सीएसई एंड आईटी विभाग और फेकल्टी हेड डॉ. मुकेश कुमार उपस्थित थे। कार्यक्रम के अंत में आईसेक्ट ग्रुप की विज्ञान पत्रिका 'इलेक्ट्रानिकी आपके लिए' का विमोचन संपादक मंडल के सदस्य द्वय मोहन सगोरिया एवं रवींद्र जैन की उपस्थिति में आमंत्रित अतिथियों द्वारा किया गया एवं स्मृति चिन्ह प्रदान किये गए।

रिपोर्ट : राग तेलंग

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल

राष्ट्रीय कार्यशाला में बिग डाटा एनालिटिक्स पर विस्तार से चर्चा

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में बिग डाटा एनालिटिक्स विथ आर विषय पर दो दिवसीय राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन किया गया। यह कार्यशाला म.प्र. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् की सहभागिता से आयोजित की गई। कार्यशाला का मुख्य उद्देश्य शोधार्थी व संकाय सदस्यों को नई टेक्नॉलॉजी के संबंध में जागरुक करना था। कार्यशाला का शुभारंभ प्रो.वी.के.वर्मा, संयोजक कोर रिसर्च ग्रुप रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय व डॉ. संजीव गुप्ता, डीन एकेडमिक ने किया। प्रो. वर्मा ने अपने संबोधन में कार्यशाला के महत्व को बताते हुए कहा कि इस दो दिवसीय कार्यशाला से डाटा साइंस की नवीन तकनीक के संबंध में जानकारी प्राप्त होगी। डॉ. हुकुम चन्द्रा नेशनल फेलो व वरिष्ठ वैज्ञानिक, आईसीएआर-इंडियन एग्रीकल्चरल स्टेटिक्स रिसर्च ने वर्तमान शोध के परिदृश्य पर आर लैंग्वेज के महत्व पर प्रकाश डाला। वहीं डॉ. एस.बी. लाल, वरिष्ठ वैज्ञानिक सेंटर फार एग्रीकल्चरल बायोइंफारमेटिक्स ने बिग डाटा के संबंध में प्रतिभागियों से विस्तार से चर्चा की। डॉ. राजेश सक्सेना वरिष्ठ वैज्ञानिक, म.प्र. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् ने रिसर्च प्रोजेक्ट के प्रस्ताव को तैयार करने के संबंध में जानकारी दी और बताया कि किस तरह वित्तीय संस्थाएं अच्छे रिसर्च प्रोजेक्ट के लिये फंड दे सकती हैं। इस दो दिवसीय वर्कशाप में डाटा एनलिटिक्स एण्ड विजुवलाइजेशन, बिग डाटा एनालिटिक्स का परिचय, आर लैग्वेज के साथ डाटा विजुवलाइ-जेशन के विभिन्न टूल, रिसर्च प्रोजेक्ट के प्रस्ताव तथा वित्तीय संस्थानों की जानकारियां पर विस्तार से चर्चा की गई। इस कार्यशाला में विभिन्न विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों के पचास से अधिक शोधार्थी और विद्यार्थी उपस्थित थे। समापन अवसर पर सह संयोजक डॉ. राजेन्द्र गुप्ता ने म.प्र. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् के सहयोग से सफलता पूर्वक आयोजित इस कार्यशाला के लिये परिषद का आभार व्यक्त किया।

ग्रामीण सामुदायिक सहभागिता पर कार्यशाला का आयोजन

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग द्वारा ग्रामीण सामुदायिक सहभागिता पर राष्ट्रीय सेवा योजना के अधिकारियों के लिये एक दिवसीय उन्मुखीकरण सह प्रशिक्षण कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला का आयोजन महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण शिक्षा परिषद हैदराबाद, उच्च शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत शासन के सहयोग से किया गया।

इस कार्यशाला में एम.एस.डब्ल्यू., समाज शास्त्र, शिक्षा, लाइफ साइंस, मैनेजमेंट, कामर्स आदि विभाग से संबंधित चालीस प्राध्यापकों ने भाग लिया। कार्यशाला का मुख्य उद्देश्य एन.एस.एस. के अधिकारियों को गांवों की समस्याओं को समझकर समुदाय को साथ लेकर समस्याओं को हल करना था। इस कार्यशाला में पांच समूह में विभिन्न गतिविधियां आयोजित की गई। इन समूहों ने गाँव की समस्याओं से अवगत कराया। गाँव में जाकर समूहों ने ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली, पानी, शिक्षा, आवागमन, संचार की समस्याओं के बारे में विस्तार पूर्वक जानकारी दी। अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों की इन समस्याओं के हल के लिये समुदाय की सहभागिता अत्यंत आवश्यक है।

कार्यशाला के प्रारंभ में रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो.ए.के. ग्वाल ने स्वागत भाषण देते हुए कहा कि सामुदायिक सहभागिता ग्रामीण समुदायों में परिवर्तन का महत्वपूर्ण साधन है। इस कार्यशाला से एन.एस.एस. के अधिकारी, ग्रामीण समुदायों को साथ लेकर ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य करेंगे। रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय की एन.एस.एस. की कार्यक्रम अधिकारी डॉ. रेखा गुप्ता ने कार्यशाला की रूपरेखा प्रस्तुत की। चालीस प्रतिभागियों ने भी अपने विचारों को साझा किया। इस कार्यशाला के विभिन्न सत्रों को महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण शिक्षा परिषद् हैदराबाद की कार्यक्रम समन्वयक सुश्री ख्याति धुर्वे ने संबोधित किया। कार्यशाला में डॉ. श्री जी सेठ, पूर्व कार्यक्रम अधिकारी एनएसएस, डॉ. सुधीर कुमार शर्मा, श्रीमती अनुपमा पांडे, शुभम चौहान, विश्वविद्यालय के एन.एस.एस. अधिकारी, विद्यार्थी, विभिन्न विभागों के विभागाध्यक्ष उपस्थित थे।

एनएसएस इकाई का सात दिवसीय विशेष शिविर संपन्न

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय की राष्ट्रीय सेवा योजना इकाई का ग्राम गोकुलाकुंडी में सात दिवसीय विशेष शिविर सफलता पूर्वक आयोजित किया गया। विगत सप्ताह आयोजित सात दिवसीय शिविर का विषय ''स्वास्थ्य-जनस्वच्छता एवं व्यक्तिगत स्वास्थ्य, कौशल भारत'' था।

सात दिवसीय शिविर के दौरान अलग-अलग दिन ग्रामवासियों व छात्रों को कई विषय विशेषज्ञों द्वारा उपयोगी जानकारियां दी गईं। विश्वविद्यालय के विश्व कला एवं संस्कृति केन्द्र के निदेशक विनय उपाध्याय द्वारा अभिप्रेरणा एवं व्यक्तित्व विकास, विश्वविद्यालय के सी.वी.रमन सेन्टर फॉर साइंस कम्युनिकेशन के निदेशक राग तेलंग द्वारा विज्ञान दिवस, प्रो. शंभू रतन अवस्थी द्वारा रोजगार के अवसर, जवाहर लाल नेहरू कैंसर अस्पताल भोपाल के डॉ.एन. गणेश एवं उनकी टीम द्वारा ग्रामवासियों को जागरूक करना और जानकारी प्रदान करना, डॉ. प्रवीण कुमार जग्गा, शासकीय कृषि महाविद्यालय विदिशा द्वारा जल संरक्षण एवं मृदा परीक्षण पर ग्रामवासियों को जानकारी प्रदान करना एवं विश्वविद्यालय के ललित नारायण द्वारा कौशल विकास एवं स्वरोजगार विषय पर जानकारी प्रदान की गई। एएसजी आई हास्पिटल भोपाल के डॉ. विनायक द्वारा ग्रामवासियों का स्वास्थ्य परीक्षण एवं जागरुकता अभियान, शासकीय टीबी हास्पिटल भोपाल के डॉ. मनोज शर्मा द्वारा ग्रामवासियों को योग का महत्व विषय पर विस्तृत जानकारी प्रदान की गई। डॉ. आर सी धावरी द्वारा सोख्ता गढ्ढ़ा, विश्वविद्यालय के लाइब्रेरियन डॉ. राकेश खरे द्वारा समाज की प्रगति में पुस्तकालय की भूमिका, विश्वविद्यालय के वीरेन्द्र धीर द्वारा समाज में युवाओं की भूमिका पर जानकारी एवं दंत रोग विशेषज्ञ डॉ. प्रशांत त्रिपाठी द्वारा ग्रामवासियों का दंत परीक्षण किया गया। विश्वविद्यालय के छात्र फईयाम ने विभिन्न योगासनों को प्रदर्शित कर ग्रामीणजनों को स्वस्थ्य जीवन का संदेश दिया। इस अवसर पर स्वयं सेवक द्वारा घर-घर जाकर सर्वे किया एवं ग्रामीणजनों को जागरुक करने का प्रयास भी किया। ग्रामवासियों को साबुन वितरण किये गये, स्वयं सेवकों द्वारा जनस्वास्थ्य एवं स्वच्छता रैली एवं पर्यावरण चेतना एवं जागरुकता रैली निकाली गई। समापन अवसर पर स्वयं सेवकों को प्रमाण पत्र एवं पुरस्कार से नवाज़ा गया।

ज्ञातव्य है कि ग्राम गोकुलाकुंडी को रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय ने गोद लिया है और विश्वविद्यालय निरंतर प्रयास कर रहा है कि गाँव की प्रगति में अपना योगदान दे सके। इस शिविर में विश्वविद्यालय की राष्ट्रीय सेवा योजना इकाई के नब्बे स्वयं सेवकों ने सक्रिय भूमिका निभाई।

तीन दिवसीय लोक कला महोत्सव

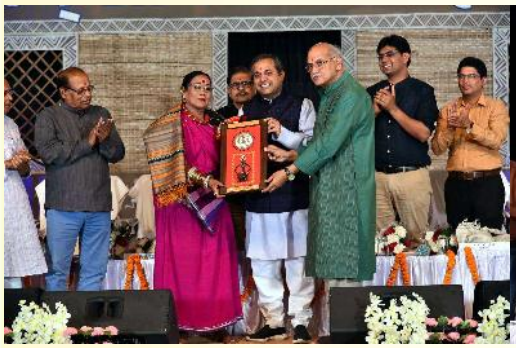

डॉ. सी.वी.रामन विश्वविद्यालय में तीन दिवसीय रामन लोक कला महोत्सव का शुभारंभ पद्म विभूषण पंडवानी गायिका तीजन बाई ने अपने पारंपरिक और चिर परिचित अंदाज पांडवानी की शानदार प्रस्तुति के साथ हुआ। इसके बाद मुंबई के कबीर कैफे ने जमकर धूम मचाया। नीरज आर्य एवं साथी ने कबीर के दोहे को वेस्टर्न धुन में गाया और नए रूप में अंचल के लोगो के सामने रखा, जिसे सभी ने पसंद किया। लोरमी के राबेली ग्रुप ने बांस गीत की प्रस्तुति दी विलुप्त होते इस कला को लोगों ने बहुत सराहा। डॉ.सी.वी. रामन विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने छत्तीसगढ़ी नृत्य की प्रस्तुति दी। शाम को विश्वविद्यालय के महोत्सव में सम्पूर्ण छत्तीसगढ़ की संस्कृति नज़र आई। मुख्य अतिथि बिलासपुर विधायक शैलेश पांडे ने कहा कि नई टेक्नॉलॉजी युवाओं को लोक कला और संस्कृति से दूर ले जाती जा रही है। आज अपनी मिट्टी से जुड़ने की जरूरत है। विवि ने यह महत्वपूर्ण कार्य किया है और यह महोत्सव राष्ट्रीय और अंतराष्ट्रीय रूप लेगा। श्री पाण्डेय ने कहा कि सीवीआरयू छत्तीसगढ़ की लोक कला को अनंत काल का संरक्षित करेगा।

विज्ञान व तकनीकी शिक्षा के साथ लोक कला को समझना जरूरी-चौबे

विश्वविद्यालय के कुलाधिपति संतोष चौबे ने कहा कि विज्ञान और तकनीक की शिक्षा के साथ-साथ लोक कला को समझना जरूरी है। यह हमें हमारी संस्कृति से जोड़ती है। आज के वैश्विक युग में युवाओं को अपनी लोक कला और संस्कृति की जानकारी होना चाहिए। उनके साथ जीवन जीना ही वास्तविक जीवन होता हैं। उन्होंने कहा कि विश्वविद्यालय के लिए यह गौरव की बात है कि आज हमारे बीच पद्म विभूषण तीजन बाई है। हमें अपनी विरासत को सम्मान करना चाहिए। श्री चौबे ने तीजन बाई को स्व. शारदा चौबे लोक सम्मान से विभूषित किया।

कला व संस्कृति के बिना जीवन की अधूरा- प्रो.दुबे

विश्वविद्यालय के कुलपति प्रोफेसर रवि प्रकाश दुबे ने कहा कि कला संस्कृति और साहित्य मानव जीवन का अनिवार्य अंग है इसके बिना मानव जीवन ही अधूरा है खासकर भारत एक सहिष्णु देश है। जिसमें विश्व की सारी विधाएं संस्कृति इसमें समाहित है। जहाँ तक छत्तीसगढ़ की लोक कला संस्कृति की बात है तो अभी इसे और ऊँचाइयों तक जाना है और ऐसे आयोजन के माध्यम से युवा और अंचल के लोग इसे समझ पाएंगे।

लोक कला और लोक गायन से भी सर्वोच्च शिखर संभव-गौरव

विश्वविद्यालय के कुलसचिव गौरव शुक्ला ने कहा कि चूंकि यह विश्वविद्यालय आदिवासी क्षेत्र में स्थापित किया गया है। इसलिए लोक कला धरोहर को न केवल संरक्षित करने बल्कि उसे आगे बढ़ाने का दायित्व विश्वविद्यालय का है। लोक कला, संस्कृति महोत्सव कराने वाला यह प्रदेश का पहला विश्वविद्यालय बन गया है। श्री शुक्ला ने कहा कि आधुनिकता और पाश्चात्य के फेर में विद्यार्थी न उलझे बल्कि लोक कला और लोक गायन से भी सर्वोच्च शिखर तक पहुँचा जा सकता है इसका जीवंत उदाहरण पदम विभूषण तीजन बाई हमारे बीच उपस्थित है। इसी तरह कबीर के ज्ञान को युवाओं तक रोचक माध्यम से पहुँचाने वाले कबीर कैफे भी एक बहुत बड़ा उदाहरण है। इसी तरह विलुप्त होती बाँस गीत की प्रस्तुति भी आज यहाँ होनी है।

सीवीआरयू में समाया समूचा छत्तीसगढ़

लोक महोत्सव के पहले दिन आज छत्तीसगढ़ विश्वविद्यालय के परिसर में नजर आया । छत्तीसगढ़ी गाने, छत्तीसगढ़ी परिधान, छत्तीसगढ़ी व्यंजन, छत्तीसगढ़ी कला सहित अनेक स्टॉल यहाँ लगाए गए थे इसके साथ मंच पर छत्तीसगढ़ी कलाकारों और विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने रंगारंग प्रस्तुतियाँ दीं। छत्तीसगढ़ की संस्कृति, कला, धर्म, परिधान, रहन-सहन, व्यवहार की भी जानकारी विद्यार्थियों को देने के लिए रामन लोक महोत्सव आयोजित किया गया है इसमें समूचे छत्तीसगढ़ को एक स्थान पर लाया गया है।

लोककला महोत्सव के दूसरे दिन लोक कलाकारों ने छत्तीसगढ़ी लोक गीत और लोक संगीत की प्रस्तुतियां दी। इसी तरह नाट्य दल अभिनय छत्तीसगढ़ की बात को लोगों के सामने रखा। छत्तीसगढ़ी व्यंजनों का सभी ने आनंद लिया और प्रदर्शनी के माध्यम से प्रदेश की माटी को जाना समझा। इस अवसर पर कार्यक्रम के मुख्य अतिथि तखतपुर विधायक रश्मि सिंह ने कहा कि संस्कृति से जिसका लगाव होता हैं, हर देश और राज्य की संस्कृति उसकी अपनी संस्कृति होती है। डॉ. सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय अग्रेंजी पद्धति के साथ संस्कृति और लोककला की भी शिक्षा दे रहा है। यह पूरे प्रदेश के लिए गौरव की बात है। श्रीमती सिंह ने छत्तीसगढ़ और मध्यप्रदेश के अनेक कलाकारों को याद करके उनकी बातें साझा की। उन्होंने इस आयोजन के लिए

विश्वविद्यालय परिवार को बधाई दी। इस अवसर पर भोपाल से आए कथाकार एवं संपादक समावर्तन मुकेश वर्मा, कवि एवं गद्यकार बलराम गुमास्ता, आईसेक्ट के निदेशक नितिन वत्स और वनमाली सृजनपीठ के अध्यक्ष सतीश जायसवाल व विश्वविद्यालय के सभी विभागों के विभागाध्यक्ष, प्राध्यापक, विद्यार्थी सहित हजारों की संख्या में अंचल के लोग उपस्थित थे।

प्रसन्नता की खोज के लिए मिट्टी से जुड़ना होगा-चौबे

विवि के कुलाधिपति और कार्यक्रम के अध्यक्ष संतोष चौबे ने एक संदर्भ को याद करते हुए बताया कि भारतीय सबसे अधिक खुश इसलिए रहते हैं, क्योंकि हमें अपनी मिट्टी की खुशबू की समझ है, हमें अपनी प्रकृति के साथ जीवन जीना आता है, हमें पशु पक्षियों के व्यवहार का ज्ञान है और हमें मानवीय मूल्यों की जानकारी है। यह बातें अपनी लोककला और संस्कृति को समझने वाले ही समझ सकते हैं। इसके लिए सबसे पहले हमें अपनी मिट्टी से जुड़ना होगा। प्रसन्नता की खोज के लिए मिट्टी से जुड़ना होगा। यह आयोजन इस दिशा में ही एक कदम है।

इस अवसर पर विश्वविद्यालय के कुलसचिव गौरव शुक्ला ने कहा कि रामन लोक कला महोत्सव सभी विद्यार्थियों के जीवन में रस घोलेगी। यह महोत्सव जीवन आनंद के साथ विद्यार्थियों के जीवन में मूल्यों को भी जागृत करेगा। इस मंशा से ही महोत्सव का आयोजन किया जा रहा है। सीवीआरयू लोक कला, संस्कृति, लोक परंपरा को सरंक्षित व संवर्धित करने के लिए संकल्पित है।

कार्यक्रम में रायपुर से आए राकेश तिवारी और साथियों ने राजा फोकलवा नाटकी का मंचन किया। इस महोत्सव में पहले दिन पद्म विभूषण पंडवानी गायिका तीजन बाई ने अपने पारंपरिक और चिर परिचित अंदाज पांडवानी की शानदार प्रस्तुति दी। इसके बाद मुंबई के कबीर कैफे ने जमकर धूम मचाया। नीरज आर्य एवं साथी ने कबीर के दोहे को वेस्टर्न धुन में गाया और नए रूप में अंचल के लोगो के सामने रखा, जिसे सभी ने पसंद किया।

नरवा, गरूवा, घुरवा अठ बाड़ी भी...

रामन लोक महोत्सव में छत्तीसगढ़ के लोक कला संस्कृति से संबंधित स्टहल लगाए गए हैं, जिसमें की प्रदेश सरकार की योजनाओं की भी झलक नज़र आ रही है। विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों द्वारा नवा गरबा बाढ़ पर केंद्रित प्रदर्शनी लगाई। विश्वविद्यालय के ग्रामीण प्रौद्योगिकी विभाग की ओर से हर्बल गार्डन और बड़ी की फसल का स्टॉल भी लगाया गया जिसमें विद्यार्थियों किसानों को हर्बल और फसल उत्पादन की जानकारी दी। इसी तरह माटी कला, कोसा आर्ट, छत्तीसगढ़ी व्यंजन, पर्रा, सूपा, छत्तीसगढ़ी परिधान सहित अनेक प्रदर्शनी ने सभी को मोहा। लोककला महोत्सव के तीसरे और अंतिम दिन डॉ. निशांत शुक्ला के बांसुरी वादन के साथ कलाकारों ने गेड़ी नृत्य, पंथी नृत्य, छत्तीसगढ़ी लोक गीत और नृत्य की प्रस्तुति दी।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि लोरमी विधायक धर्मजीत सिंह ने कहा कि लोक कला, लोक गायन, संस्कृति, सभ्यता ही हमारे छत्तीसगढ़ की पूंजी है। इस पूंजी को ही सहेजने की जरूरत है। इसे राजाश्रय मिलना चाहिए। उन्होंने कहा कि बहुत हर्ष की बात है कि डॉ.सी.वी.रामन विश्वविद्यालय लोक कला के संरक्षण और संर्वधन के लिए कार्य कर रहा है। विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित मस्तूरी विधायक कृष्णमूर्ति बांधी ने कहा कि प्रदेश के कलाकार हमारे गौरव हैं और विश्वविद्यालय की यह बड़ी कल्पना है। जो इस क्षेत्र में काम कर रहा है। मैं इसके लिए विश्वविद्यालय परिवार को साधुवाद देता हूँ। विवि के कुलपति प्रो.आर.पी. दुबे ने कहा कि जिस प्रकार छत्तीसगढ़ को वन संपदा और खनिज संपदा के लिए जाना जाता है। इसी तरह लोक कला और लोक संस्कृति भी हमारी समृद्धशाली संपदा है। इसे संरक्षित एवं संर्वधित करने के लिए विश्वविद्यालय में ग्रामीण प्रौद्योगिकी विभाग, छत्तीसगढ़ी शोधपीठ और संग्रहालय की स्थापना की गई है।

छत्तीसगढ़ी भाषा और लोक संस्कृति केंद्र की स्थापना होगी-चौबे

विश्वविद्यालय के कुलाधिपति और कार्यक्रम के अध्यक्ष संतोष चौबे ने कहा कि हमारे संस्थान की अपना दर्शन है और प्रतिबद्धता है। इसलिए हम लोक कला और संस्कृति के क्षेत्र में काम कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि वि.वि. में छत्तीसगढ़ी भाषा और संस्कृति केंद्र की स्थापना की जाएगी। जिसमें छत्तीसगढ़ से जुड़े हर क्षेत्र में शोध कार्य किया जाएगा। विश्वविद्यालय के कुलसचिव गौरव शुक्ला ने कहा कि लोक कला का उतना ही महत्व है जितना की आज शिक्षा का महत्व है। इसलिए हर विद्यार्थी का अपनी लोक कला और संस्कृति की जानकारी होना चाहिए। उन्होंने कहा कि हर साल रामन लोक कला महोत्सव आयोजित किया जाएगा। हम अगले साल नए उत्साह, उमंग के साथ हम सबके सामने होंगे।

●

जिफलिफ में जलतरंग
कबीर कैफे ने रॉक अंदाज में गाया दोहा, अभिषेक ने पढ़ा मन

संतोष चौबे के उपन्यास 'जलतरंग' पर फिल्म बनाने की प्लानिंग

डॉ.सीवी रामन, दैनिक भास्कर, गोयल टीएमटी और रेडियो पार्टनर 94.3 माय एफएम के सहयोग से रायपुर में आयोजित दो दिवसीय कार्यक्रम 'जिफलिफ' में दूसरे दिन प्रसिद्ध साहित्यकार संतोष चौबे के उपन्यास 'जलतरंग' पर चर्चा हुई। प्रख्यात गीतकार एवं पटकथा लेखक अशोक मिश्रा (नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा) ने बताया इस उपन्यास पर फिल्म बनाने की प्लानिंग चल रही है। उन्होंने बताया जलतरंग पढ़ने के बाद हमने इस पर नाटक तैयार किया। नाटक दो घंटे से ज्यादा अवधि का था। लोगों ने कहा कि ऑडियंस बोर हो जाएगी। इतनी देर नहीं देखेगी। फिर भी मैंने नाटक करने का निर्णय लिया। भारत भवन में लोगों ने सवा दो घंटे तक नाटक देखा। नाटक देखने के लिये लोगों की लंबी कतार लगी थी। आगे संतोष चौबे के उपन्यास 'जलतरंग' पर फिल्म बनाने की भी प्लानिंग है। इस कार्यक्रम में विनय उपाध्याय मॉडरेटर के रूप में उपस्थित थे।

ल्यूक ने गाया - रायपुर यूं देखता है क्या, जिंदगी ना मिलेगी दोबारा

कार्यक्रम में डॉक्यूमेंट्री 'रीक्यूमेंट्री' की स्क्रीनिंग हुई। डायरेक्टर अभिमन्यु कुकरेजा और एक्टर ल्यूक ने बताया कि 90 मिनट की रॉक्यूमेंट्री में देश में रॉक म्यूजिक की शुरुआत से लेकर मौजूदा दौर तक की स्थिति पेश की गई है। इसमें उन रॉक आर्टिस्ट की कहानी शामिल है जो सालों से इसे न सिर्फ जिंदा रखे हुए हैं बल्कि पॉपुलर भी बना रहे हैं। चर्चा के दौरान ल्यूक ने रायपुर शब्द को जोड़ते हुए गाया- ये है वक्त का इशारा, रायपुर यूं देखता है क्या, जिंदगी ना मिलेगी दोबारा...। उन्होंने लोगों से शहर के म्यूजिशियन्स को सपोर्ट करने की अपील की।

कबीर कैफे की टीम ने दी एनर्जिटिक परफार्मेंस

दो दिवसीय द ग्रेट इंडियन फिल्म एंड लिटरेचर फेस्टिवल (जिफलिफ) के दूसरे दिन कबीर कैफे की टीम ने म्यूजिलक परफॉर्मेंस दी। कार्यक्रम में कबीर कैफे की टीम ने होशियार रहना नगर में चोर आवेगा... मन लोगों मेरो यार फकीरी में... जैसे दोहो को वायलिन, गिटार, मेंडोलीन और ड्रम जैसे म्यूजिकल इंस्ट्रूमेंट्स के साथ रॉक फॉर्म में पेश किया।

केसी शंकर ने पढ़ी कहानी- जमाने के पत्थर सहन कर गया, दोस्त का पत्थर लगा दिल पर

स्टोरी टेलिंग में केसी शंकर ने दो दोस्तों कहानी 'जमाने के पत्थर सहन कर गया, दोस्त का पत्थर लगा दिल पर' पढ़ी। शाश्विता शर्मा ने कहानी 'चेचक के दाग' का मंचन किया। संचालन आशा कुमारी ने किया।

माइंड रीडर अभिषेक ने मिनटों में बता दिया एटीएम का कोड

माइंड रीडर अभिषेक आचार्या ने लोगों के दिमाग पढ़ने जैसी यूनीक एक्टीविटी से सभी को चौंका दिया। मेंटलिस्ट अभिषेक आचार्या ने स्टेज पर आते ही कहा कि क्या आपको लगता है कि कोई आपका दिमाग पढ़ सकता है? आचार्या ने माइंड रीड कर अवनी तथा उपस्थित जनों के एटीएम कार्ड के नंबर तथा कोड बतला कर मस्तिष्क में चलने वाली चीजों को बता कर लोगों को हैरत में डाल दिया। वहीं कॉमेडियन अबिजीत गांगुली ने जोक्स से लागों को जमकर हँसाया।